जनपद चम्पावत
के
दर्शनीय स्थल

पुस्तक प्रकाशन हेतु विशेष सहयोग

श्रीयुत् नरेन्द्र सिंह लडवाल जी
चेयरमैन "सी हॉक ग्रुप"
निवासी-अस्सी पट्टी, रौलमेल पाटी
जनपद-चम्पावत (उत्तराखण्ड)
मो० : 09811644490
E-mail : narendra@seahawk.in
web : www.seahawk.in

जनपद चम्पावत
के
दर्शनीय स्थल

परिकल्पना एवं परामर्श
दीपेन्द्र कुमार चौधरी
आई०ए०एस०
जिलाधिकारी चम्पावत

लेखक
इन्द्र लाल वर्मा

विनसर® पब्लिशिंग कं०
देहरादून–उत्तराखण्ड

जनपद चम्पावत के दर्शनीय स्थल

© इन्द्र लाल वर्मा

संस्करण : प्रथम, 2014
ISBN : 978-81-86844-63-2
मूल्य : 200/-

प्रकाशक : विनसर पब्लिशिंग कम्पनी
8, प्रथम तल, के०सी० सिटी सेंटर
4, डिस्पेन्सरी रोड, देहरादून-248 001
उत्तराखण्ड, (भारत)
दूरभाष : 0135-3294463
Website : www.winsar.org
E-mail : winsar.nawani@gmail.com

शब्द संयोजन : विनसर हिमालय न्यास
देहरादून, उत्तराखण्ड

आवरण : विपिन बमराड़ा

PRINTED IN INDIA

Published by Kirti Nawani for Winsar® Publishing Co., Dehradun
& Printed at Manglani Arts, Dehradun (Uttarakhand)

पूज्य पिताजी स्व० श्री नाथ लाल वर्मा
की पावन स्मृति में
वंदनीया माताजी श्रीमती गंगा वर्मा के
चरणों में सादर समर्पित

नमन/आभार

चंद राजाओं की राजधानी, स्वतंत्रता सेनानियों की जन्म एवं कर्मस्थली, लोक गाथाओं, लोक मान्यताओं, परम्पराओं, चित्ताकर्षक, शिल्पकलाओं से परिपूर्ण, आराध्य देवों की कृपा स्थली जनपद चम्पावत के बारे में यह संकलन एक प्रयास मात्र है। पुरातन से ही इस जनपद के विभिन्न स्थलों के मनोरम दृश्यों, आराध्य देवी–देवताओं, परम्पराओं, लोक गाथाओं आदि का वर्णन किया जाता रहा है। दुर्गम भौगोलिक स्थिति के कारण यहां के सुरक्षित अभिलेखों, ताम्रपत्रों, राजस्व विवरणों तक का ठीक से प्रकाशन नहीं हो पाया है। कारणतः जनपद का क्रमबद्ध सटीक इतिहास प्राप्त होना काफी कठिन महसूस होता है। किन्तु यह तथ्यपरक जान पड़ता है कि यहां पर राजनीति की अपेक्षा धर्म, कला, संस्कृति तथा पर्यटन का अधिक महत्व रहा है।

देवपूजा करना भारतीय संस्कृति की अपनी विशिष्टता रही है, प्राचीन काल से चले आ रहे धार्मिक मेलों के आयोजन में हमारी आस्था, आध्यात्म और धर्म पर आधारित विचारों, किंवदंतियों और धर्मप्राण भारत के जनजीवन के उत्थान की धारणाओं का समावेश सन्निहित होता है।

ऊँचे पर्वत शिखरों पर स्थित रमणीक स्थल हों या निर्जन वनों के मध्य अलौकिक शान्ति प्रदत्त वादियाँ, कल–कल, छल–छल करती मनभावन नदियों के तट हों या फिर सड़क मार्ग के आस–पास के मनोरम स्थल। जनपद चम्पावत में स्थान–स्थान पर पौराणिक मान्यताओं पर आधारित विभिन्न देवी–देवताओं के देवालय स्थापित है।

पौराणिक मान्यताओं पर आधारित इन देव स्थलों के बारे में अनेकों लोक मान्यतायें एवं किंवदंतियाँ प्रचलित है। अगाध आस्था के इन धार्मिक स्थलों के बारे में प्रचलित किंवदंतियों पर आधारित मान्यताओं पर यदा–कदा दैवीय प्रभाव के प्रति किंचित शंका पैदा होती है। किन्तु विस्मयकारी दृश्यों एवं चमत्कारिक प्रभावों को

दृष्टिगत करें तो देवालयों की स्थापना के प्रति अगाध विश्वास एवं श्रद्धा बलवती हो जाती है। देवालयों के साथ–साथ जनपद के ऐतिहासिक स्थल भी अति रमणीक एवं मनोरम है जो पर्यटकों को बरबस अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

पुस्तक उत्तराखण्ड का सीमांत जनपद चम्पावत में हमने जनपद के ऐतिहासिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि के बारे में लिखने का प्रयास किया, इस जनपद के जिलाधिकारी श्री दीपेन्द्र कुमार चौधरी जी द्वारा पुस्तक का विमोचन किया गया एवं पुस्तक की सराहना की गई। जनपद के विकास के प्रति आदरणीय जिलाधिकारी महोदय की सोच से प्रभावित होकर प्रस्तुत पुस्तक का लेखन प्रारम्भ हुआ। उनके द्वारा जनपद में पर्यटन विकास की सम्भावनाओं पर गम्भीरतापूर्वक चिन्तन करते हुए पर्यटन विकास में सहायक पुस्तक के रूप में इस जनपद के दर्शनीय स्थलों के बारे में पुस्तक लेखन की मुझसे अपेक्षा की गई। उन्हीं की परिकल्पना एवं परामर्श से यह पुस्तक आपके हाथों में है, यह एक प्रयास मात्र है, सुधी पाठकों, विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं बुद्धिजीवियों से अनुरोध है कि पुस्तक में वर्णित दर्शनीय एवं धार्मिक स्थलों के बारे में मेरी जानकारियाँ आपसे बहुत कम होंगी। कई स्थल मेरी जानकारी से अछूते रहे होंगे। अपनी महत्वपूर्ण जानकारियों से मुझे भी परिचित करायेंगे। आपके सहयोग एवं सुझावों से आगामी संस्करणों में जनपद के दर्शनीय स्थलों का विस्तृत विवरण समाहित किया जाना सम्भव हो सकेगा।

कोई भी रचना आत्मीय जनों के सहयोग, सद्भावना एवं प्रोत्साहन से ही पूर्ण हो पाती है। पुस्तक लेखन के प्रति जनपद के पूर्व मुख्य शिक्षा अधिकारी श्री दिनेश चन्द्र गौड़ द्वारा मुझे जो प्रोत्साहन दिया गया, उसके लिए मैं आजीवन उनका कृतज्ञ रहूँगा। तत्कालीन उपजिलाधिकारी श्री प्रत्यूष सिंह, जिला आपदा प्रबन्धन अधिकारी श्री मनोज पाण्डेय सहित जनपद के अधिकारियों, कर्मचारियों, शिक्षकों एवं मेरे स्टॉफ के सभी साथियों द्वारा मुझे प्रोत्साहित किया गया, सभी के प्रति मैं कृतज्ञतापूर्वक अभिवादन करता हूँ। आपकी सद्भावनायें मुझे प्रगति पथ पर अग्रसर करती है।

उन सभी आत्मीय स्वजनों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने मुझे जनपद के विभिन्न धार्मिक स्थलों के बारे में प्रचलित किंवदंतियों एवं लोक मान्यताओं के बारे में जानकारियाँ दी एवं फोटोग्राफ उपलब्ध कराये।

मेरे परिवार में मेरी धर्मपत्नी श्रीमती संगीता वर्मा, पुत्र देशदीपक वर्मा, पुत्री दीपशिखा वर्मा सहित सभी अग्रजों एवं अनुजों की सद्भावनायें मेरे साथ है। मेरी पत्नी एवं पुत्र–पुत्री द्वारा हमेशा मेरे कार्य को महत्व दिया गया। पुस्तक रचना का अधिकतम श्रेय मेरी पत्नी को ही जाता है जिसने अति विपरीत परिस्थितियों में पारिवारिक जिम्मेदारियों का निर्वहन कर मुझे पारिवारिक जिम्मेदारियों से मुक्त रखा तभी मैं स्वतन्त्र होकर लेखन कार्य कर सका।

पुस्तक प्रकाशन के सुअवसर पर पूज्य गुरुदेव श्री रामचन्द्र जी महाराज (बाबूजी महाराज) रामचन्द्र मिशन शाहजहाँपुर का स्मरण करते हुए अपने प्रेरणाश्रोत आई०वी०आर०आई० के पूर्व प्राचार्य वैज्ञानिक, बेस्ट सिटिजन ऑफ इण्डिया बड़े भाई डॉ० जे०सी० वर्मा, अपने समाचार पत्रों में मेरी रचनाओं को स्थान देकर मुझे प्रोत्साहित करने वाले सम्पादक 'पहाड़ों के झरोखे से' श्री ललित प्रसाद पाण्डेय (बाबा आदित्यदास), उत्तराखण्ड के प्रमुख साहित्यकार डॉ० दिनेश बलूनी को सादर नमन। पूज्यनीया माताजी एवं पिता तुल्य सभी बड़े भाईयों के चरण स्पर्श/वन्दन के साथ स्व० पिताजी की पावन स्मृति में सादर समर्पित।

गुरु पूर्णिमा, 12 जुलाई, 2014
पी०जी० कालेज रोड, लोहाघाट
जनपद–चम्पावत।
फोन : 9412925508

bUæ yky oek ¼lŒvŒ½
रा०इ०का० बरदाखान
जनपद चम्पावत

दीपेन्द्र कुमार चौधरी
आई०ए०एस०

जिलाधिकारी / जिला मजिस्ट्रेट
चम्पावत
दूरभाष : 05965–230286 (का०)
05965–230275 (आ०)

mÙkjk[k.M ljdkj

संदेश

प्रिय,

श्री वर्मा,

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता है कि आपके द्वारा जिला प्रशासन चम्पावत के अनुरोध पर जनपद–चम्पावत के ऐतिहासिक, धार्मिक एवं दर्शनीय स्थलों के बारे में "**tuin&pEikor d n'kuh; LFky**" पुस्तक का प्रकाशन किया जा रहा है। सामाजिक और सांस्कृतिक समरसता के संदर्भ में अपने पूर्वजों की धरोहरों को संजोये हुए जनपद की गौरवशाली परम्परा, संस्कृति, साहित्य एवं सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण एवं संवर्द्धन में आम–जनमानस को जागरुक करने का आपका प्रयास सराहनीय है। जनपद के दर्शनीय स्थलों के संवर्द्धन में तथा पर्यटकों की जानकारी हेतु पुस्तक सहायक होगी।

मैं पुस्तक प्रकाशन के लिए आपको सहृदय शुभकामनायें प्रेषित करते हुए आपके उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ।

श्री इन्द्र लाल वर्मा
सहायक अध्यापक
राजकीय इण्टर कालेज
बरदाखान (चम्पावत)

सद्भावनाओं सहित

¼nhiUæ dekj pkS/kjh½

रमेश चन्द्र आर्य
मुख्य शिक्षा अधिकारी, चम्पावत

दूरभाष : 05965–230531 (का०)
05965–230531 (आ०)

संदेश

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि मेरे जनपद के दुर्गम क्षेत्र में कार्यरत शिक्षक श्री इन्द्र लाल वर्मा द्वारा इस जनपद की गौरवशाली परम्परा, संस्कृति एवं सांस्कृतिक विरासतों के बारे में प्रचलित लोकमान्यताओं, किंवदंतियों को उल्लिखित करते हुए जनपद की संस्कृति के प्रचार–प्रसार एवं जनपद में पर्यटन विकास की सम्भावनाओं से परिचित कराने का प्रयास किया गया है।

वर्तमान संदर्भ में सामाजिक समरसता को दृष्टिगत करें तो भारतीय संस्कृति की मौलिक प्रासांगिकता बढ़ गई है। मुझे आशा है जनपद की सामाजिक समरसता के साथ–साथ आस्था एवं पर्यटन विकास में पुस्तक सहायक सिद्ध होगी।

पुस्तक "जनपद चम्पावत के दर्शनीय स्थल'' के प्रकाशन पर श्री वर्मा को सहृदय शुभकामनायें देते हुए उनके प्रयास की सराहना करता हूँ तथा उनके उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ।

श्री इन्द्र लाल वर्मा
सहायक अध्यापक
राजकीय इण्टर कालेज
बरदाखान (चम्पावत)

शुभकामनाओं सहित

¼je'k pUæ vk;½

अनुक्रम

1.	**जनपद के प्रमुख नगर एवं कस्बे**	**17–27**
	चंपावत	17
	लोहाघाट	20
	टनकपुर	23
	शहरी गांव बनबसा	24
	सूखीढांक	26
2.	**प्रमुख दर्शनीय स्थल**	**28–40**
	अद्वैत आश्रम मायावती	28
	बाणासुर का किला	29
	गुरुद्वारा रीठासाहिब	31
	रुद्रेश्वर गुफा (वारसी)	33
	विवेकानंद आश्रम श्यामलाताल	36
	पंचेश्वर	38
	एबट माउंट	39
	एकहथिया नौला	40
3.	**प्रमुख धार्मिक स्थल**	**41–91**
	पूर्णागिरि मंदिर	41
	बालेश्वर मंदिर	43
	हिंग्लादेवी मंदिर	46
	हरेश्वर बेताल	47
	चम्पावत के पीर पैगंबर	49
	न्याय देवता गोरल (गोल्ज्यू)	50
	ऐड़ी फटकशिला मंदिर	54
	सूर्य मंदिर खेतीखान	56
	मानेश्वर मंदिर	56
	देवीधाम अखिल तारिणी	58

घटोत्कच मंदिर 59
ब्यानधुरा ऐड़ी 61
चमू मंदिर चमदेवल 63
लड़ीधूरा मंदिर 65
पंचमुखी महादेव मंदिर टनकपुर 67
वरदायिनी मंदिर–बरदाखान 68
देवीधार मंदिर लोहाघाट 69
झूमाधूरी मंदिर 70
ढेरनाथ मंदिर 71
महादेव मंदिर रेगड़ू 73
बाराही मंदिर देवीधूरा 75
रणशिला/भीमशिला 78
चार द्योली सुंई 79
ऋषेश्वर महादेव मंदिर लोहाघाट 82
लधौनधुरा 84
गुरु गोरखनाथ 85
कड़ाई देवी मंदिर बिशुंग 86
डिप्टेशवर मंदिर चम्पावत 87
क्रांतेश्वर महादेव मंदिर 88
नागनाथ मंदिर चम्पावत 89
नागार्जुन मंदिर नखरूंघाट 90
वैष्णवी देवी मंदिर मडलक 90
शिव मंदिर मजपीपल 91

4. साभार/सन्दर्भ ग्रन्थ 92–93

5. आभार 94–95

6. खबरों में चम्पावत 96–104

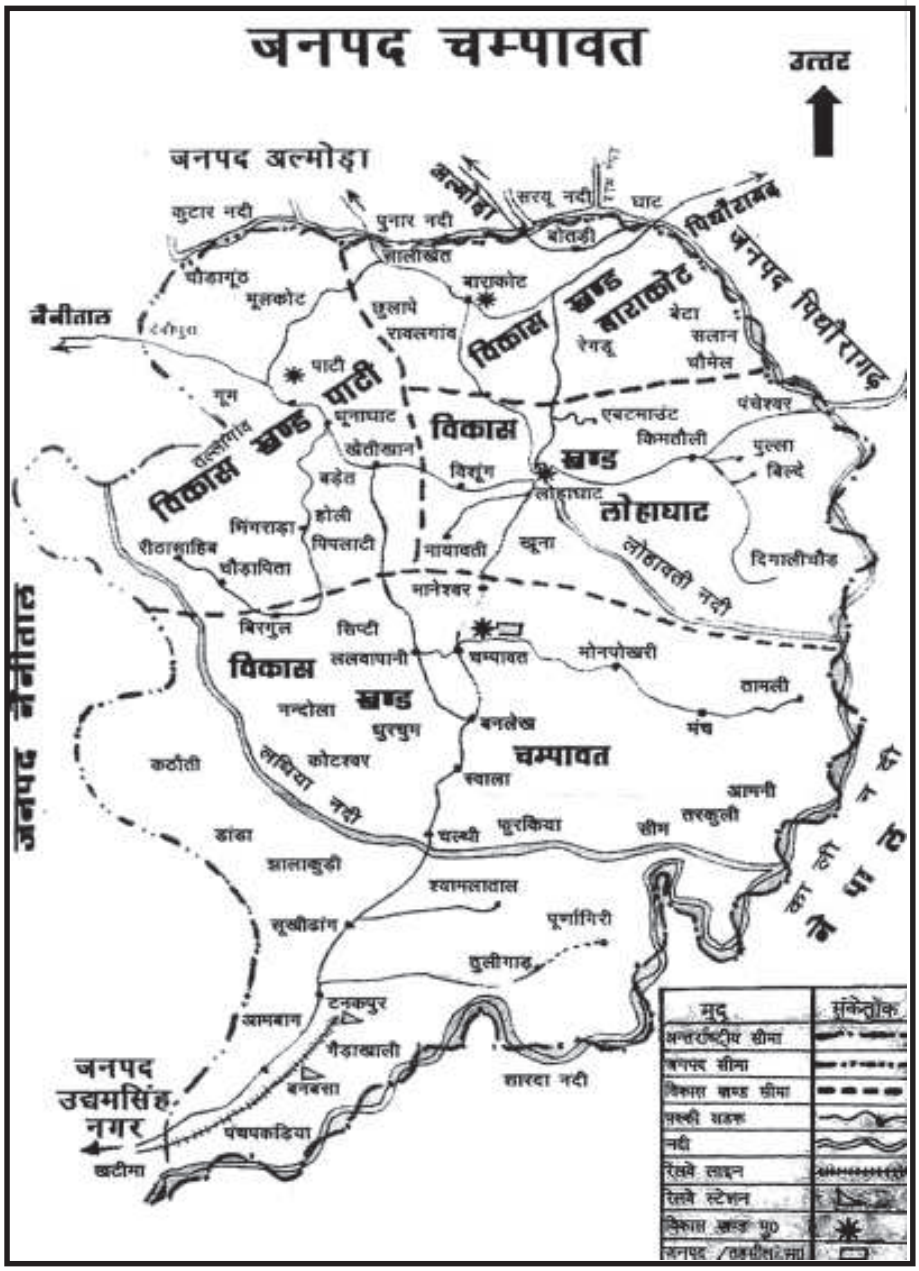

जनपद चम्पावत–नक्शा

1

जनपद के प्रमुख नगर एव कस्बे

pikor

टनकपुर–तवाघाट राष्ट्रीय राजमार्ग में टनकपुर से 75 किलोमीटर की दूरी पर चारों ओर से ऊंची–ऊंची वनाच्छादित पर्वत श्रेणियों के मध्य एक समतल क्षेत्र में जनपद चंपावत का मुख्यालय चंपावत नगर स्थित है। घने बांज, बुरांश, देवदार आदि के वृक्षों एवं सघन झुरमुटों से आच्छादित पर्वत श्रेणियों का ढलान चंपावत की ओर होने से शहर की छटा अति मनोहर हो जाती है।

देवभूमि उत्तराखण्ड के पर्यटन स्थलों में चंपावत अपनी विशिष्ट पहचान रखता है। अतीत में ऐतिहासिक गतिविधियों का केन्द्र रहा यह स्थल प्राचीन शिल्पकला, चित्ताकर्षक कृतियों, अपार प्राकृतिक सौन्दर्य एवं आध्यात्मिक स्थलों से परिपूर्ण है। स्कन्द पुराण के मानस खण्ड में इस क्षेत्र के सम्बन्ध में अनेक प्रसंग उपलब्ध है। पौराणिक ग्रन्थों से विदित होता है कि भगवान विष्णु ने चंपावती नदी के निकट क्रांतेश्वर पर्वत में कुर्म रूप में अवतार लिया था। जिससे उस पर्वत का नाम कुर्मांचल हो गया। चंपावत के निकट हिंग्लादेवी मंदिर के भीतर 03 फिट चौड़ी, 04 फिट लम्बी तथा 01 फिट ऊंची शिला है जिसे आज भी ''कुर्मशिला'' के नाम से जाना जाता है। कालान्तर में इसी कुर्मांचल को ''कुमु'' कहा जाने लगा। चंपावत से पूर्व की ओर ऊंचे पर्वत पर क्रांतेश्वर महादेव मंदिर स्थापित है। जिसे ''कूर्मपाद'' माना जाता है।

काली कुमाऊं के इस परगने को काली कुमाऊं नाम दिये जाने के बारे में कई किंवदंतियाँ है। एक किंवदंति यह भी है कि राम–रावण युद्वकाल में कुम्भकरण का सिर कट कर चंपावत क्षेत्र में आ गिरा। इस कारण इस क्षेत्र को ''कुम्भू'' तथा कालान्तर में ''कुम्मू'' कहा जाने लगा। चंद शासन काल में भी इसे ''कुर्म नगर'', ''कुमाऊं गर्ख'' के नाम से जाना जाता था।

कुमाऊं के इतिहास में चंपावत का विशिष्ट स्थान रहा है। चंपावत का मूल नाम चंपावती बताया गया है। जो चंपावती नदी के तट पर

बताया गया है। चंपावत में चंपावती नामक गाड़ में सात प्राचीन मंदिर– बालेश्वर, क्रान्तेश्वर, ताड़केश्वर, ऋषेश्वर, डिक्टेश्वर, मल्लाड़ेश्वर तथा मानेश्वर है इनमें बालेश्वर मंदिर प्रमुख माना जाता है। गुरुपादुका (जोशीमठ) नामक ग्रन्थ के अनुसार नागों की बहिन चंपावती ने चंपावत के बालेश्वर मंदिर के पास तपस्या की थी। उसकी स्मृति में चंपावती का मंदिर आज भी स्थित है। वायु पुराण के अनुसार चंपावत पुरी नागवंशीय नौ राजाओं की राजधानी थी।

चंपावत कुमाऊं के मध्य कालीन चंद वंश का मौलिक स्थल रहा है। चंपावत में चंद वंश की स्थापना में जो घटना प्रमुख रूप से स्वीकार की जाती है वह इस प्रकार है कि–इलाहाबाद के झूंसी नामक स्थान में चन्दवंशी चंदेला राजपूत रहते थे। ज्योतिष की सलाह पर कुंवर सोम चंद अपने 27 सलाहकारों के साथ बद्रीनाथ की यात्रा पर आये, उस समय काली कुमाऊं में ब्रह्मदेव कत्यूरी का शासन था। कुंवर सोमचंद को देख कर वे बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने अपनी एकमात्र कन्या का विवाह सोमचन्द से कर दिया तथा पन्द्रह बीघा जमीन दहेज में उपहार स्वरूप दे दी। इस प्रकार सोम चन्द को एक छोटा सा राज्य प्राप्त हो गया। चंपावत में राजा सोमचन्द ने अपना किला बनवाया, जिसका नाम 'राजबुंगा' रखा। लोकमतानुसार यह घटना सन् 700 ई० की है। किले के चारों ओर चार फौजदार, कार्की, बोरा, तड़ागी और चौधरी रखे गये। ये चारों फिरकों के नेता थे। जो किलों में रहते थे इन्हें ''आल'' कहा जाता था। ये काली कुमाऊं की ''चार आल'' के रूप में प्रसिद्ध हुए।

राजा सोमचन्द ने अपने फौजदार कालू तड़ागी की सहायता से सर्वप्रथम स्थानीय रौत राजा को परास्त कर निकटस्थ स्थानों पर अपना अधिकार स्थापित किया। राजा ने झिझाड़ के जोशी सुधानिधि को दीवान, सिमल्टिया पाण्डे को राजगुरू, देवलिया पाण्डे को पुरोहित तथा बिष्टों को कारदार बनाया। ये ब्राह्मण 'चौथानी' कहलाते थे। महर एवं फर्त्याल दलों के हाथ में राजकाज की बागडोर रहती थी। जिस नेता का बहुमत होता उसे प्रधानमंत्री नियुक्त किया जाता था। इस प्रकार सोमचंद ने चंपावत में चंद राज्य की स्थापना की। राजा सोमचंद के बाद उनके पुत्र आत्मचंद, चंद वंश के उत्तराधिकारी बने। पश्चात क्रमशः संसार चंद, हमीर चंद, वीणा चंद आदि ने चंपावत की राजगद्दी संभाली। माना जाता है कि 869 वर्षों तक चंपावत में चंद राजाओं का राज्यकाल रहा।

चंपावत कभी चंदों के प्रारम्भिक उत्कर्ष काल में राजशाही चहल पहल की नगरी रही होगी। स्थापत्य और कला पूर्णतया स्वतंत्र रही होगी। यहां के नौले–पोखरों में पनिहारिनों का जमघट लगा रहता होगा। बालेश्वर, नागनाथ आदि मंदिरों में नित्य पूजा आरती के लिये भांति–भांति की साज सामग्री की थालें सजी रहती होंगी। नित्य भोग में अपना भाग पाने के लिए आसनधारी, जपी–तपी, साधु–सन्यासी पंक्ति लगाये बैठे रहते होंगे। राजबुंगा के द्वार पर प्रतिदिन प्रातः सायं बजने वाली नौबत प्रजा के दिलों में राजा की प्रभुता और गरिमा से कितना रोमांचित और आतंकित करती रही होगी। किले के भीतर चल रहे राजकाज की शैली, षडयत्रों, मित्रता, छल, विश्वास का ताना बाना बुना जाता रहा होगा। अतिथियों का स्वागत सत्कार कितना भव्य होता होगा। प्रजा जनों में न्याय एवं दण्ड की चर्चा आम होती होगी। किले के भीतर राजशाही क्रियाकलापों में यदा–कदा दखल अंदाजी करने वाले सामर्थ्यवान लोग अपने निवासों को लौटते हुए कई किस्से कहानियाँ बयां करते होंगे। जो भी हो चंपावत की प्राकृतिक सुन्दरता को उस अवधि में काफी तराशा गया। चंद शासन भले ही आज कल्पना मात्र रह गया हो लेकिन तत्समय के विकसित नौले, पोखरों, चबूतरों, किलों, मंदिरों की स्थापत्य कला चंद शासन को स्मृति कराती रहेगी।

राजा भीष्म चन्द को यह महसूस होने लगा था कि अब चंद राज्य का विस्तार काफी बढ गया है अभी तक राजधानी राज्य के किनारे पर स्थित है। अतः अब यह स्थान राजधानी के लिए उपयुक्त नहीं है। भीष्म चन्द के बाद उनके पुत्र बालो कल्याण चंद ने अपने पिता की इच्छानुसार सन् 1563 में अपने राज्य का विस्तार करते हुये राजधानी के रूप में केन्द्रीय स्थान अल्मोड़ा को चुना। चंपावत से चंद राजाओं की राजधानी अल्मोड़ा स्थानान्तरित हो गयी और चंपावत की राजबुंगी इतिहास की एक घटना मात्र रह गयी। राजधानी परिवर्तन के साथ राजशाही की मूल्यवान उपयोगी वस्तुए, सिपहसालार, गायक, गुणीजन, मंत्री, पुरोहित सब नई राजधानी अल्मोड़ा में शोभा पाने लगे। चंद शासन के साथ ही व्यापारी नौकरी–पेशा, पुरोहितों सहित अधिसंख्य लोग अल्मोड़ा प्रवासित हो गये और चंपावत रह गया एक परित्यक्त सुनसान कस्बा। लेकिन यहां के बुजुर्गों ने साहस नहीं खोया। हालांकि राजशाही सुंगध और चहल पहल के स्पन्दन का एहसास हृदय विदारक रहा होगा फिर भी धीरे–धीरे चंपावत का जनजीवन सामान्य होने लगा। अपने दिन बहुरने के

इंतजार में सदियां बीत गई, कई शासक आये और चले गये किन्तु चंपावत अपनी खोई रौनक के दिनों की वापसी की प्रत्याशा में ही रहा।

अंग्रेजी शासन काल में 1872 में पौड़ी के साथ–साथ चंपावत को तहसील का दर्जा दिया गया। तहसील बनने के बाद अंग्रेज अधिकारियों के इस क्षेत्र में आशियाने बनने लगे। अल्मोड़ा जनपद की इस सीमान्त तहसील को 1972 में पिथौगराढ़ जनपद में शामिल कर दिया गया। छोटी प्रशासनिक इकाइयों को विकास में सहायक मानने तथा दुर्गम भौगोलिक परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए उत्तर प्रदेश की तत्कालीन मुख्यमंत्री सुश्री मायावती ने 15 सितम्बर 1997 को चंपावत को जनपद का दर्जा दिया। जिले के सृजन और गठन के साथ ही राजशाही के पुराने दिन प्रशासनिक इकाई के रूप मे लौटने लगे, इस जनपद में पूर्ववर्ती चम्पावत तहसील के अलावा जनपद उधमसिंह नगर के खटीमा विकासखण्ड के 35 राजस्व ग्रामों को सम्मिलित करते हुए पर्वतीय तथा मैदानी भू–भाग (माल और हिमाल) को जनपद की प्रसाशकीय इकाई में समाहित किया गया।

जनपद स्थापना के समय जनपद में एकमात्र तहसील चंपावत ही थी। वर्तमान में चंपावत, लोहाघाट, पाटी, बाराकोट, पूर्णागिरी, 05 तहसीलें इस जनपद में है। जनपद मुख्यालय के इस ऐतिहासिक शहर की राजशाही रौनक फिर लौटने लगी है। चंपावत शहर फिर गुलजार होने लगा है। विभिन्न चोटियों पर प्रशासकीय भवनों, कार्यालयों ने इसकी शोभा और बढ़ा दी है। अपने अतीव सुन्दरतम प्राकृतिक सौन्दर्य, ऐतिहासिक विरासतों, चित्ताकर्षक प्राचीन शिल्पकलाओं को सहेजे इतिहास की मनोरम स्मृतियों के साथ यह नगर उत्तरोत्तर प्रगति पथ पर अग्रसर है।

अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण शहर के ऐतिहासिक स्थलों, मंदिरों, नौले पौखरों को संरक्षित एवं सुसज्जित किया जाय, स्थानीय उत्पादों के संरक्षण हेतु शीत गृहों के निर्माण, स्थानीय उत्पादों पर आधारित लघु उद्योग विकसित किये जाये तो निश्चित रूप से यह ऐतिहासिक नगर उत्तराखण्ड के महत्वपूर्ण पर्यटन नगरों में शुमार होगा।

ykgk?kkV

मनोरम प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण चारों ओर से छोटी–छोटी पहाड़ियों से घिरा यह नगर पौराणिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान रहा है। जनपद मुख्यालय से 13 किमी० उत्तर की ओर टनकपुर–तवाघाट राष्ट्रीय राजमार्ग में लोहावती नदी के किनारे देवीधार,

फोर्ती, मायावती, एबटमाउंट, मानेश्वर, बाणासुर का किला, झूमाधूरी आदि विशेष धार्मिक एवं ऐतिहासिक स्थलों के मध्य स्थित होने से इस नगर की सुन्दरता और बढ़ जाती है। जनपद का यह मुख्य शहर जहां से ग्रामीण क्षेत्रों को आवागमन होता है प्रमुख व्यापारिक स्थल भी है। इसलिए इसे जनपद चम्पावत का ह्रदयस्थल कहा जाता है। देवदार वनों से घिरे इस नगर की समुद्रतल से ऊँचाई 5500 फिट है। बाराह पुराण में इस स्थान को लोहार्गल कहा गया है। भगवान बाराह ने कहा है कि हिमालय में लोहार्गल नाम का एक गुप्त क्षेत्र है जो पांच योजन तक विस्तृत है। एक समय इस पवित्र स्थल पर दानवों ने आक्रमण कर दिया, तब बराह भगवान ने ब्रह्मा, रुद्र स्कंद, मरूद्गण, आदित्य, चन्द्रमा, बृहस्पति तथा अन्य देवताओं को इस स्थान पर सुरक्षित कर सुदर्शन चक्र से निशाचरों का संहार किया।

भगवान बराह इस क्षेत्र की महिमा का गुणगान करते हुए कहते हैं कि इस स्थान पर प्रतिष्ठित उनकी मूर्ति का जो व्यक्ति श्रद्धापूर्वक दर्शन करता है वह उनका भक्त बन जाता है। जो मनुष्य तीन रात्रि यहां निवास करता है वह कई हजार वर्षों तक स्वर्ग का सुख भोगता है, इसलिए सिद्धि चाहने वाले मनुष्यों को लोहार्गल क्षेत्र में आगमन करना चाहिए। भक्ति में रत रहने वाला जो व्यक्ति यहां प्राण त्यागता है वह स्वर्गलोक से भी आगे मेरे धाम में स्थान प्राप्त करता है।

कत्यूरी शासनकाल से ही लोहाघाट अच्छी स्थिति में रहा है। सन् 1790 में अन्य क्षेत्रों की तरह यह क्षेत्र ईस्ट इंडिया कम्पनी के नियंत्रण में आया और सन् 1947 तक ब्रिटिश शासकों के अधीन रहा। यहाँ की प्राकृतिक सुन्दरता से अंग्रेज बहुत प्रभावित थे। ब्रिटिश काल में लोहाघाट को लोहूघाट कहा जाता था। अंग्रेजों ने लोहाघाट को अपना आवास बनाया। यहां पर सेना की एक टुकड़ी रखी। फर्नहिल और चनुवांखाल की भूमि को चाय एवं फलोत्पादन के लिए हेन्सी एवं श्रीमती हौस्किन को लीज पर दी। पश्चात हेन्सी की भूमि को 'टलक' नामक अंग्रेज को हस्तान्तरित की गई जिसे 'टलक स्टेट' कहा जाने लगा। लोहाघाट में कतिपय अंग्रेजों के बसने के पश्चात वर्तमान चिकित्सालय परिसर के निकट बैरकें बनाई गई, ब्रिटिश सेना को सन् 1939 में हवालबाग से लाकर लोहाघाट में स्थाई छावनी बनाई गई। उस स्थान पर वर्तमान में राजकीय इण्टर कालेज है चांदमारी नामक इस स्थान पर

युद्धाभ्यास किया जाता था। सन् 1846 के जन विद्रोह के कारण यहां से सैनिक छावनी हटा दी गई।

अंग्रेजों के आगमन के पश्चात लोहाघाट में विकास के युग का सूत्रपात हुआ। इस क्षेत्र में शिक्षा, स्वास्थ्य, राजस्व, कानूनी, भूमि बंदोबस्त, मार्ग निर्माण आदि के लिए प्रयास किये गये। लोहाघाट को काली कुमाऊँ सब डिविजन का मुख्यालय बनाया गया। उसी समय का बना कारागार जनपद चंपावत की अस्थाई जेल है। सन् 1950 में टनकपुर–तवाघाट मार्ग के निर्माण से लोहाघाट के विकास में गति आई। अल्मोड़ा जनपद के इस परगने को सन् 1960 में पिथौरागढ़ जनपद श्रृजन के पश्चात् 1972 में पिथौरागढ़ में सम्मिलित कर लिया गया।

सन् 1997 में चम्पावत जनपद की स्थापना के पश्चात यह जनपद का प्रमुख नगर है। 10 दिसम्बर 1959 को टाउन एरिया की मान्यता मिलने के बाद 12 जुलाई 1972 को इसे नोटिफाइड एरिया तथा 04 जून 1994 को नगर पंचायत की श्रेणी में आने तक निरन्तर यहाँ की जनसंख्या में वृद्धि होती रही। ग्रामीण क्षेत्रों से लोग आकर यहां बसने लगे। 1872 में इस नगर की जनसंख्या मात्र 98 थी जो सन् 1960 में लगभग 1000 हो गई और वर्तमान में लगभग 20 हजार की आबादी इस नगर में निवास करती है। शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सड़कों की सुविधा होने से यह नगर जनसंख्या के साथ–साथ व्यापारिक मंडी के रूप में विकसित हो रहा है। यहां के स्थानीय मेलों का नजारा अद्भुत होता है। मंदिरों में आयोजित मेलों में श्रद्वा, संस्कृति के साथ–साथ भाईचारे का समन्वय होता है। नगर के मध्य स्थित हथरंगिया में कालू सैय्यद बाबा की मजार है जो सामुदायिक सद्भावना की अनूठी मिशाल है सभी धर्मों के लोग गुड़–चना चढ़ाकर मनौतियां मांगते हैं। लोहावती नदी के संगम स्थल पर शिवालय की महिमा से आस्थावान नागरिक भलीभांति परिचित हैं। सांस्कृतिक धरोहर के रूप में यहां की रामलीला प्रसिद्ध है। खेलों के प्रति युवाओं में उत्साह है यहां का फुटबॉल मैच इस नगर की पहचान बढ़ाता है व्यापारिक दृष्टि से नगर का महत्वपूर्ण स्थान है ग्रामीण क्षेत्रों के स्थानीय उत्पाद यहां आसानी से उपलब्ध हो जाते हैं।

प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण इस नगर के आसपास के दृश्यों का 'मासूक' सहित कई फिल्मों में फिल्मांकन हुआ है। नगर के सौन्दर्य को देवदार के जंगलों ने और भी सुन्दरता दी है। अपने अनूठे सौन्दर्य

सामुदायिक समरसता से परिपूर्ण यह शहर पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। चारों ओर से मन्दिरों, ऐतिहासिक स्थलों से घिरे देवदार वृक्षों की छाया का दृश्य मनोरम तो है ही यदि कोलीढ़ेक में प्रस्तावित झील का निर्माण सड़कों, धार्मिक, ऐतिहासिक स्थलों का पुर्नरूद्धार, मृतप्राय प्रसिद्ध चर्म उद्योग का विकास, फलोद्यान, फल संरक्षण चाय बागानों का विस्तार किया जाय तो उत्तराखंड के आकर्षक पर्यटक नगरों में लोहाघाट नगर भी शुमार होगा।

Vudij

शहरी क्षेत्रों से जनपद चम्पावत के पर्वतीय प्रवेश द्वार पर स्थित टनकपुर नगर जनपद आगमन का एक मात्र रेलवे स्टेशन है। जनपद चम्पावत के सबसे घनी आबादी वाले इस नगर से ही उत्तर भारत के प्रसिद्ध तीर्थ पूर्णागिरि धाम तथा कुमाऊं में सर्वत्र पूजित ऐड़ी ब्यानधूरा के मार्ग प्रशस्त होते हैं। यह क्षेत्र उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक पूर्णतः वनों से आच्छादित था। नेपाल की सीमा से संलग्न टनकपुर एक छोटा सा गांव था। यहां से तीन मील की दूरी पर ब्रह्मदेव मंडी थी। जिसे कत्यूरी राजाओं ने बसाया था। कालान्तर में भूस्खलन होने के कारण मंडी पूर्ण रूप से दब गई थी। कुछ समय बाद यहाँ पर पुनः एक व्यापारिक कस्बा विकसित होने लगा।

लोक मान्यता है कि एक समय सृष्टिकर्ता ब्रह्मा ने प्राचीन ब्रह्मदेव मंडी के निकट शारदा नदी के तट पर कांकर घाट में एक विशाल यज्ञ का आयोजन किया था। यहां आज भी प्राचीन यज्ञस्थली, हवनकुंड व प्राचीन नगर के भग्नावशेष बिखरे हैं। इसलिए टनकपुर को ब्रह्मा का यज्ञस्थल भी माना जाता है। यह भी मान्यता है कि गढ़ी गोठ में प्राचीनकाल में बाणासुर का सस्त्रागार था और गढ़गोठ में पांडवों से उसका युद्ध हुआ था। इसी प्रकार चूका के निकट शारदा तट पर भगवान परशुराम ने कठोर तप किया था।

सन् 1890 में एक अंग्रेज टलक व उसका मित्र मंजर हंसी जब इस स्थान पर आए तो इस स्थल की प्राकृतिक सुन्दरता से प्रभावित होकर सर्वप्रथम टलक व हंसी ने बगडोरा (सैलानी गोठ) में तथा एक अन्य अंग्रेज मेटसिन ने पुरानी टंकी के निकट आवास के लिए बंगले बनवाये। पश्चात् सुनियोजित ढंग से इस नगर को बसाने का प्रयास किया लार्ड टलक के नाम से पहले इसे टलकपुर कहा गया, किन्तु बाद में यह स्थान

टनकपुर कहा जाने लगा। पहले यह क्षेत्र जनपद अल्मोड़ा में सम्मिलित था। ब्रिटिश काल में टनकपुर से तवाघाट तक 6 फिट चौड़ा पैदल मार्ग बनाया गया था। जिससे आवागमन की काफी सुविधा हो गई।

ब्रिटिशकाल तथा स्वतंत्रता के कई वर्षों तक दारमा और व्यास घाटियों के भोटिया व्यापारी यहां आकर ऊन का व्यापार करते थे। नेपाल से भी यहां आयात–निर्यात होता रहा है। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में यहां अवध–तिरहुत रेल लाईन बिछाई गई। साथ ही यह नगर सड़क मार्ग से दिल्ली, देहरादून, मुरादाबाद, बरेली और लखनऊ आदि से जुड़ गया।

सुनियोजित ढंग से निर्मित बाजार, चौड़ी खुली सड़कें, फैले हुए फुटपाथ, खुली हवादार कालोनियां इस नगर की विशेषताएं हैं। पूर्णागिरि का मुख्य द्वार के रूप में शारदा नदी के तट पर बसा हुआ यह नगर पर्यटकों और प्रकृति प्रेमियों के आकर्षण का केन्द्र है।

इसके उत्तर में पूर्णागिरि एवं पंचमुखी महादेव, पश्चिम में गुरुद्धारा तथा दक्षिण में मैथोडिस्ट चर्च धार्मिक एकता एवं बन्धुत्व के प्रतीक हैं यह नगर कुमाऊं की प्रसिद्ध व्यापारिक मण्डियों में से एक है।

कार्तिकी ज्येष्ठ पूर्णिमा, मकर संक्रांति आदि पर्वों के अवसर पर अनेक श्रद्धालु शारदा नदी में स्नान कर पुण्य लाभ प्राप्ति के उद्देश्य से टनकपुर आते हैं। अन्य समय पर भी देश–विदेश के पर्यटकों का यहां आवागमन होता रहता है। विशेष रूप से पूर्णागिरि मेले के समय लाखों श्रद्धालुओं से नगर में चहल–पहल रहती है। अपनी धार्मिक, सांस्कृतिक, व्यापारिक महत्ता और प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण यह इस जनपद का प्रमुख नगर बन गया है।

बागेश्वर रेल परियोजना, टनकपुर–जौलजीवी मोटर मार्ग, पंचेश्वर बांध आदि महत्वाकांक्षी परियोजनायें जनपद में प्रस्तावित है। इन परियोजनाओं के निर्माण से जनपद चम्पावत का यह प्रमुख नगर विकसित होगा। जिससे जनपद में शहरों से मूलभूत आवश्यकताओं की वस्तुओं का आदान प्रदान होगा और पहाड़वासियों का शहरी क्षेत्रों में आवागमन सुगमता से होगा।

'kgjh xko cuc lk

भारत नेपाल के सम्बन्धों में निरन्तरता बनाये रखने वाला शहरी कस्बा जनपद चम्पावत के अन्तिम छोर और मैदानी क्षेत्र से जनपद

आगमन पर प्रवेश द्वार पर स्थित है। सम्भवतया घने वनों के मध्य स्थित होने के कारण इस स्थान का नाम बनबसा पड़ा होगा। यह मैदानी भू–भाग पर्वतीय लोगों का प्रिय स्थल रहा है। आज से कुछ वर्षों पूर्व तक जब पर्वतीय क्षेत्र के लोग व्यापार के लिये शीतकाल में माल–भावर जाते थे तो बनबसा उनके विश्राम का मुख्य स्थल था। कहा जाता है कि आस–पास के पर्वतीय क्षेत्र के गांवों के लोग यहां सर्दियों में गाय–भैंस चराने आते थे तथा दिनभर घाम–तापकर (धूप सेंककर) सांय अपने घरों को वापस जाते थे।

बनबसा का यह क्षेत्र सैकडों वर्षों से शारदा नदी के तटों, कुमाऊं व नेपाल दोनों ही भूभागों के व्यापारिक व सांस्कृतिक आदान–प्रदान की पहिचान रहा है। इन दोनों भागों के लोगों के आपस में रोटी–बेटी की संबंध रहे हैं किन्तु सन् 1815 में अंग्रेजों और नेपाल के बीच हुई संधि के आधार पर कुमाऊं व नेपाल की सीमा को काली नदी से निर्धारित कर दिया। काली पार का भाग नेपाल व काली कुमाऊं का क्षेत्र भारत का हिस्सा बन गया। इसके साथ ही बनबसा क्षेत्र को पीलीभीत जनपद में सम्मिलित कर दिया गया। सन् 1861 तक यह तराई जनपद का हिस्सा रहा। सन् 1996 में जनपद नैनीताल में तथा जनपद पिथौरागढ़ के गठन के बाद बनबसा उसमें रहा। वर्तमान में यह जनपद चंपावत की एक ग्राम पंचायत है।

टनकपुर परिवहन निगम का महत्व बनबसा के कारण ही है। यहां से प्रतिदिन सैकड़ों यात्रियों का आवागमन होता है महेन्द्र नगर नेपाल और उसके लगभग 250 किलोमीटर क्षेत्र के लोगों का आना–जाना बनबसा से ही होता है। ऐतिहासिक एवं व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण जनपद का यह कस्बा अंग्रेजी शासनकाल में काफी प्रगति पर रहा होगा। बनबसा में भारत–नेपाल को जोड़ने के लिए निर्मित पुल बनबसा बैराज आज भी पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र हैं। तत्कालीन शिल्पकला और इंजीनियरिंग की मिशाल बने इस पुल के निर्माण के सम्बन्ध में बताया जाता है कि 1920 में इस पुल का निर्माण कार्य प्रारम्भ हुआ और आठ वर्षों बाद 1928 में पूर्ण हुआ। लगभग दस करोड़ की धनराशी इस परियोजना में व्यय हुई। बनबसा के पास शारदा नदी का अधिकांश भाग नेपाल की सीमा में आता है नेपाल से भूमि लेकर इसके एवज में उत्तर प्रदेश के बहराइच में उसे भूमि दी गई। आठ वर्षों में निर्मित इस पुल के निर्माण में नदी के बहाव व अन्य हादसों में कई मजदूरों को जान गंवानी पड़ी। भारत–नेपाल में प्रतिदिन सैकड़ों लोग इस पुल से गुजरते

हैं। पूर्णागिरि मेले के दिनों इस पुल से हजारों दर्शनार्थी आवागमन करते है। अंग्रेजी शासन काल में बनी रेल की पटरियां डांक बंगले (आवास गृह) आदि से प्रतीत होता है कि अंग्रेज अधिकारियों के आवास का यह प्रमुख स्थल रहा होगा और यहां पर रेलवे स्टेशन बनाने की उनकी योजना भी रही होगी। ऐतिहासिक धरोहरों से परिपूर्ण, आवागमन का प्रमुख केन्द्र एवं पूर्वजों के माल प्रवास का मुख्य पड़ाव बनबसा जनपद का प्रमुख कस्बा है। बनबसा में शैक्षणिक संस्थायें स्थापित किये जाने के साथ–साथ इसे नगर का दर्जा दिलाये जाने के लिए स्थानीय जनप्रतिनिधि प्रयासरत है।

l[kh<kd

चम्पावत–टनकपुर राष्ट्रीय राजमार्ग में चम्पावत से 52 किमी० की दूरी पर स्थित यह कस्बा टनकपुर–अस्कोट पैदल मार्ग पर आवागमन करने वाले यात्रियों का मुख्य पड़ाव था। वर्तमान सूखीढ़ांग बस स्टेशन से लगभग 01 किलोमीटर की उंचाई पर सूखीढ़ांक की पुरानी बस्ती (गांव) है। साल, चीड़ बांज बुरांश के घने जंगलों के मध्य यह स्थल अत्यन्त दर्शनीय है। काफी ऊंचाई में स्थित होने से यहाँ से पर्वत श्रृंखलाओं के मनमोहक दृष्य दृष्टिगत होते हैं। प्रसिद्ध ब्यानधुरा ऐड़ी मन्दिर की पैदल यात्रा का भी यह मुख्य पड़ाव है। सूखीढ़ांग निवासी श्री शंकर दत्त जोशी जी ने इस स्थल से जुड़े प्रसंगों की जानकारी देते हुए बताया कि राष्ट्रीय राजमार्ग में स्थित वर्तमान स्थल सूखीढ़ांग को 'बृजनगर' कहा जाता है। जोशी जी के अनुसार 1978 में ''श्री बृजमोहन चौड़ाकोटी'' द्वारा यहां पर पहली दुकान खोली गई उन्हीं के नाम से इस स्थल का बृजनगर कहा जाता है। पश्चात् राज्य सरकार ने 40 लोगों को दुकानों के लिए पट्टे पर जमीन दी गई, वर्तमान में यहां लगभग चार दर्जन दुकानें है।

चम्पावत से टनकपुर पैदल मार्ग में सूखीढ़ांग एक मुख्य पड़ाव था यहां पर यात्रियों के विश्राम के लिए एक धर्मशाला भी थी। जिसे 'आम खर्क' या आम आदमियों का निवास नाम दिया गया था। वर्तमान में इस स्थल पर सरस्वती शिशु मन्दिर संचालित है। यहां से 06 किलोमीटर की दूरी पर जनपद चम्पावत का प्रमुख दर्शनीय स्थल 'श्यामलाताल' एवं मथियाबांज–अमगढ़ी की पहाड़ियों से उतरते हुए 20 किलोमीटर की दूरी पर जनपद का प्रमुख धार्मिक स्थल ब्यानधुरा स्थित है।

इस स्थल का नाम सूखीढ़ांग पड़ने का कारण यह बताया जाता है कि यहां पर ढाक का पेड़ कभी हरा नहीं होता, ढांक का हरा होना सूखा पड़ने का लक्षण माना जाता है। यहां पर्याप्त वर्षा होने से ढ़ाक सूखा ही रहता है। टनकपुर–अस्कोट पैदल मार्ग का मुख्य पड़ाव होने के साथ–साथ यहां से धूरा–चौड़ाकोट–तलियाबांज–बुडहम ककनई होते हुए मोरनौला (अल्मोड़ा) तक पैदल मार्ग थे। इस स्थल की महत्ता को दृष्टिगत रखते हुए एक अंग्रेज अधिकारी तत्कालीन कुमाऊं कमिश्नर चार्ल्स शैरिंग के प्रयासों से सूखीढांग से मौरनौला (अल्मोड़ा) तक लगभग 100 किलोमीटर सड़क बनाई गई जिसे शेरिंग रोड कहा जाता है।

सुखीढ़ांक आज भी लगभग 40 ग्राम पंचायतों के लोगों के आवागमन का मुख्य केन्द्र है। यहां का अचार पूरे क्षेत्र में प्रसिद्ध है। औद्योगिक रूप से इस कस्बे को विकसित कहा जा सकता है। इस स्थल पर फल संरक्षण उद्योग की 06 इकाईयों पंजीकृत है। जिनका व्यवसाय अच्छा चल रहा है। इसके साथ ही डालचीनी (तेजपात) के पौधे इस क्षेत्र में अधिक है। आस–पास के अधिकांश गांवों में अदरक उत्पादित की जाती है। जनपद चम्पावत की सबसे अधिक अदरक यहां पर उत्पन्न होती है। मौन पालन के लिए यह उपयुक्त क्षेत्र है।

पैदल मार्ग के इस मुख्य पड़ाव को औद्योगिक रूप से विकसित किया जा सकता है। मैदानी क्षेत्र के निकट एवं पर्वतीय उपजाऊ भूमि क्षेत्रों का केन्द्र होने के कारण लघु उद्योगों को इस क्षेत्र में विकसित किये जाने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

मौन पालन, फलोत्पादन, फलों पर आधारित उद्योग एवं स्थानीय उपजों का उचित संरक्षण आदि को प्रोत्साहित किया जाय तो सूखीढांक में जनपद के प्रमुख औद्योगिक केन्द्र के रूप में विकसित होने की असीम सम्भावनायें है।

❑❑

2

प्रमुख दर्शनीय स्थल

v}Sr vkJe ek;korh

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में भारत में धर्मसुधार एवं सामाजिक पुर्नजागरण के आंदोलनों में रामकृष्ण मिशन की प्रमुख भूमिका रही। रामकृष्ण परमहंस के शिष्य स्वामी विवेकानंद ने भारतीय वेदांत दर्शन को आधार बनाकर भारत की आध्यात्मिक श्रेष्ठता को पश्चिमी देशों में प्रचारित किया तथा देश में आत्मगौरव तथा आत्म सम्मान को जगाया, पूर्व के अध्यात्मवाद तथा पश्चिम की भौतिक समृद्धि का समन्वय ही उन्होंने भारत के निर्माण का आधार माना।

उन्नीसवी सदी के राष्ट्रीय नवजागरण के अग्रदूत स्वामी विवेकानंद ने सैद्धांत्तिक स्तर पर यह प्रतिपादित किया कि व्यक्ति के धार्मिक व आध्यात्मिक कार्यकलापों का लक्ष्य स्वयं की मुक्ति प्राप्ति नहीं वरन जनकल्याण है। स्वामी विवेकानंद ने ईश्वर को मंदिरों की मूर्तियों तक सीमित करने की प्रवृति को चुनौती दी। ईश्वर को मंदिरों तक सीमित न रखने के साथ–साथ उन्होंने दरिद्र नारायण में ईश्वर को देखने की प्रेरणा दी। त्याग एवं सेवा के समन्वयात्मक विचार को ही गांधी जी की विचारधाराओं में प्रमुख स्थान मिला। स्वतंत्र भारत में भी प्रजातंत्र, धर्मनिरपेक्षता एवं समाजवाद जैसे विषयों पर जो दृष्टिकोण अपनाया उसे बीज रूप में स्वामी विवेकानंद द्वारा प्रतिपादित ''आत्मन विद्द्विः'' (स्वयं को पहिचानो) की वेदान्तिक मान्यता पर सेवा के साथ समन्वय में देखा जा सकता है।

स्विटजरलैंड आल्पस पर्वतमाला के दर्शन करने के बाद से ही स्वामी जी के मन में हिमालय की निर्जनता में एक ऐसा मठ स्थापित करने की इच्छा प्रबल हो रही थी कि जहां केवल अद्वैत की ही शिक्षा एवं साधना होगी, स्वामी जी की प्रेरणा से उनके शिष्य स्वामी स्वरूपानंद के सहयोग से 19 मार्च सन् 1899 को अद्वैत आश्रम मायावती की स्थापना की गई। स्वामी जी के अंग्रेज शिष्य सेवियर दम्पत्ति के०जे०एस० सेवियर तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सी०ई० सेवियर के प्रयास से मायावती में आश्रम का निर्माण हुआ।

लोहाघाट शहर से 9 किमी० की दूरी पर निर्जन वन क्षेत्र में स्थित इस आश्रम में सभी मतावलम्बियों व समस्त जाति के साधकों का बिना किसी भेदभाव के स्वागत होता है। आश्रम परिसर में किसी भी प्रकार की ब्रहम पूजा की अनुमति नहीं है। यहां तक कि श्री रामकृष्ण की भी अनुष्ठानिक पूजा निषेध है।

मायावती को स्थानीय लोग मैबट (देवी का मार्ग) कहते है, सम्भवतया मैबट शब्द का ही संस्कृतिकरण कर यह स्थान ''मायावती'' नाम से जाना जाने लगा होगा। वर्तमान में यह आश्रम श्री रामकृष्ण मठ बैलूर (कोलकाता) की एक शाखा के रूप में संचालित है। आश्रम द्वारा नर सेवा नारायण सेवा के रूप में रोगियों का निःशुल्क उपचार किया जाता है तथा समय–समय पर कुशल एवं विशेषज्ञ चिकित्सकों के शिविर लगाकर स्थानीय रोगियों को बेहतर स्वास्थ्य सुविधा मुहैया कराई जाती है। राष्ट्रनिर्माण के उद्देश्य से उत्कृष्ट पुस्तकों के प्रचार प्रसार के साथ–साथ आश्रम द्वारा प्राकृतिक विपदाओं में पीड़ित लोगों की सेवा की जाती है। चिकित्सा सेवा में आश्रम के प्रति अगाध जनविश्वास है। 1903 में एक छोटी सी डिस्पेंसरी के रूप में स्थापित इस अस्पताल में बाह्य रोगी चिकित्सा के साथ–साथ 25 शय्याओं का अंतरंग विभाग भी है।

लोहाघाट शहर से आश्रम तक पक्की सड़क की सुविधा मार्ग में अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य बरबस सैलानियों को आश्रम की ओर आकृष्ट करता है। इस पावन रमणीक स्थल पर जीवन के अलौकिक आनन्द की जो अनुभूति होती है शब्दों में उसका वर्णन सम्भव नहीं है। स्वामी विवेकानंद 3 जनवरी 1901 को इस आश्रम में पधारे थे उन्होंने दो सप्ताह तक यहां विश्राम किया। आश्रम में आकर जीवन के वास्तविक मूल्यों की अनुभूति करें और मानव समाज को उन्नत करने के उद्देश्य से स्वामी जी के द्वारा लिपिबद्ध सिद्धान्तों को आत्मसात करें।

'आशा है कि अद्वैत आश्रम को समस्त अन्धविश्वासों एवं दुर्बलताजनक प्रभावों से मुक्त रखा जाय। यहां एक मात्र शुद्ध एवं सरल एकत्व के सिद्धांतों को व्यवहार में लाया जाय। सभी दर्शनों के साथ पूर्ण सहानुभूति होते हुए भी यह अद्वैत आश्रम केवल अद्वैत के लिए ही समर्पित है।'

ck.kkl|j dk fdyk

लोहाघाट–देवीधूरा–हल्द्वानी सड़क मार्ग पर लोहाघाट से 05 किलोमीटर की दूरी पर 01 किलोमीटर की उंची चोटी पर स्थित

बाणासुर का किला जनपद के प्रमुख दर्शनीय स्थलों में से एक है। लोहाघाट शहर से इस स्थल का दृश्य मनोहारी लगता है। चारों ओर छोटी–छोटी पहाड़ियों के मध्य ऊँची चोटी पर एक समतल मैदान सा दिखाई देता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पर्वत के शिखर को काटकर इसका निर्माण कराया गया है। इसके उत्तर में हिमाच्छादित पर्वत श्रेणियां, दक्षिण में मायावती आश्रम तथा तलहटी में समतल खेत हैं। किले को सुरक्षा के लिए पूरी पहाड़ी को तरासकर बनाया गया है, किला चारों ओर से मजबूत चहारदीवारी से घिरा हुआ हैं वर्तमान में यह खंडहर है। इस किले की लम्बाई 90 मीटर तथा चौड़ाई 20 मीटर है। किले की बनावट सुरक्षा की दृष्टि से अद्वितीय है। किले की दीवारों पर निर्धारित दूरी पर शत्रु पर नजर रखने तथा आक्रमण करने के लिए सुरंगे बनी हैं। प्रत्येक दिशा में उच्च मंच बने हैं। जिससे दृष्टि दूर तक जा सके। किले के भीतर पांच भवन भग्नावस्था में बिखरे हैं। किले के भीतर स्थित कुंऐ में उतरने के लिए 32 सीढ़ियां हैं।

बाणासुर राजा बलि का सबसे बड़ा पुत्र था, शिव को प्रसन्न कर उसने हजारों हाथियों का बल प्राप्त कर लिया था। अपार शक्ति पाकर बाणासुर की भुजाएं, फड़कने लगी। उसने शिव से कहा कि या तो मुझसे लड़ने किसी वीर को भेजो अन्यथा मै आपसे ही मल्ल युद्ध करूंगा। शिव ने कहा तुम्हारा अहंकार दूर करने अवश्य ही शीघ्र कोई योद्धा आएगा।

पुराणों में वर्णित है कि बाणासुर की एक कन्या थी जिसका नाम उषा था। उसकी सहेली चित्रलेखा अपनी कल्पना शक्ति से ही किसी का भी चित्र बना लेती थी। एक रात्रि को उषा ने सपने में कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध को देखा। वह अनिरूद्ध की सुंदरता पर मुग्ध हो गई। उसने अपने मन की बात चित्रलेखा से व्यक्त की। चित्रलेखा ने अनिरुद्ध का चित्र बनाकर उषा को दिखाया। उसने सपने में इसी राजकुमार को देखा था।

उषा के कहने पर चित्रलेखा ढूंढ़ खोजकर अनिरूद्ध को द्वारिका से शोणितपुर के महल में ले आई। कुछ दिनों में बाणासुर को यह सूचना प्राप्त हो गई कि उसकी बेटी उषा के महल में कोई युवक छिपा है। बाणासुर सेना लेकर महल में छिपे अनिरुद्ध पर टूट पड़ा। उसने अनिरुद्ध को नागपाश में बांधकर कारागार में डाल दिया।

उधर द्वारिका में अनिरुद्ध की खोज होने लगी। वर्षात चौमासा व्यतीत हो गया किन्तु उसका कहीं पता नहीं चला। एक दिन नारद ने

द्वारिका जाकर कृष्ण को समाचार सुनाया कि उसका पौत्र बाणासुर की कारागार में बंद है। फिर क्या था यदुवंशियों ने दल बल के साथ शोणितपुर पर चढ़ाई कर दी। बाणासुर और कृष्ण की सेना में भंयकर युद्ध हुआ। खून की नदियां बहने लगी। कहा जाता है कि यह युद्ध छमनियां चौड़ (शोणितपुर) में हुआ था। इस मैदान की मिट्टी आज भी रक्तवर्ण की है। युद्ध में सर्वनाश के श्राप से बाणासुर ने श्रीकृष्ण के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया। अपनी पुत्री उषा का विवाह अनिरुद्ध से कर बाणासुर स्वयं शिव की सेवा में कैलास की ओर चला गया। किले तक पहुंचने के लिए मेदीढ़ेक/पोत्रीढ़ेक के पास सड़क के किनारे आकर्षक प्रवेश द्वार बना है। माँ कढ़ाई देवी मंदिर से होकर 01 किलोमीटर की चढ़ाई चढ़ने के उपरान्त किले तक पहुंचा जाता है, दूसरी ओर कर्णकरायत बाजार में सड़क के किनारे भी एक आकर्षक प्रवेश द्वार बना है। ऊँची चोटी पर किला दृष्टिगत होता है। दोनों ही मार्ग पक्के मार्ग है। दोनों ही मार्गों से किले तक सुगमता से पहुंचा जा सकता है।

किले से हिमालय की वास्तविक दर्शनों की अनुभूति होती है। इस स्थल से जनपद चंपावत, पिथौरागढ़, अल्मोड़ा, नैनीताल, की ऊंची चोटियों और किले की तलहटी पर बिशुंग के समतल उपजाऊ मैदान का अलौकिक दृश्य दिखाई देते हैं।

x#}kjk jhBk lkfgc

जनपद चम्पावत की प्रमुख नदियों रतिया एवं लधिया के संगम स्थल पर चारों ओर से पर्वत मालाओं से घिरा कई एकड़ का समतल क्षेत्र है जहां पर सिक्खों का पवित्र धार्मिक स्थल गुरूद्वारा रीठासाहिब स्थित है। लोहाघाट–देवीधूरा–हल्द्वानी मोटर मार्ग में लोहाघाट से 35 किमी० की दूरी पर धूनाघाट से रीठासाहिब को सड़क मार्ग हैं। धूनाघाट से रीठासाहिब की दूरी 38 किमी० है। लोहाघाट शहर से 63 किमी० दूरी पर स्थित इस गुरूद्वारे के बारे में सिक्खों के धार्मिक इतिहास में वर्णित है कि गुरु नानक देव ने सन् 1507 से 1515 तक अनेक स्थलों की यात्रा की इसी अवधि में वे अपने शिष्य बाला तथा मरदाना के साथ आकर कुछ दिन यहां रुके थे।

लोक मान्यता है कि कार्तिक पूर्णिमा के दिन रीठों से लदे पेड़ के नीचे सिद्ध मंडली के महन्त गुरु गोरखनाथ जी के चेले ढ़ेरनाथ जी डेरा लगाये बैठे थे। उसी वृक्ष की दूसरी तरफ गुरु नानक देव जी ने भाई

बाला जी व भाई मरदाना जी के साथ आसन लगा लिया। सिद्धों ने हैरान होकर गुरुजी के वहां आने का कारण पूछा तो गुरुजी ने बाहरी दिखावे, खोखले कर्मकाण्ड तथा पाखण्ड को छोड़कर एक अकाल पुरुष के साथ जुड़ने का उपदेश दिया। गोष्ठी के दौरान ही मर्दाना जी को जोरों की भूख सताने लगी, उन्होंने गुरुजी से खाने के लिए कुछ मांगा। गुरुजी बोले हम तो बाहर से आये हैं, सिद्धों के मेहमान हैं सिद्धों से ही याचना करो। मर्दाना जी ने विनम्रता पूर्वक सिद्धों से भोजन की मांग की। सिद्धों ने बड़े अहंकार से कहा–अगर तुम्हारा गुरु समर्थ है तो वह तुम्हारी भूख मिटाने के लिए भोजन का प्रबन्ध क्यों नहीं कर देता।

मरदाना जी के साथ ऐसा दुर्व्यवहार देखकर गुरु जी ने ऊपर लगे रीठे के फलों की ओर इशारा करते हुए मरदाना जी से कहा– 'भाई यह फल तोड़कर खा लो।' मरदाना जी अचरज में पड़ गये कि गुरुजी जहर के समान कड़वे फल को खाने के लिये कह रहे हैं। गुरुजी ने फिर कृपा दृष्टि से देखते हुए कहा सत–करतार कहकर पेड़ पर चढ़ जाओ। मरदाना जी ने रीठे तोड़कर खाना शुरू किया तो आश्चर्य चकित हो गये। पेड़ के रीठे मीठे हो रहे थे। सिद्धों को भी फल खाने को दिये गये। सिद्ध मीठे रीठे खा कर हैरान हो गये। ईर्ष्यावश सिद्धों ने मरदाना जी को डसने के इरादे से एक सांप पेड़ पर छोड़ दिया। गुरुजी ने अपनी शक्तियों से सांप को पत्थर का बना दिया। सिद्ध बड़े ही निराश हुए। अपनी तान्त्रिक शक्तियों का प्रभाव न हो पाने से लाचार होकर जोगी ढ़ेरनाथ वहां से 50 किमी० दूर लोहाघाट की ओर चले गये, और ढ़ेरनाथ में जिन्दा धरती में समा गये। बिशुंग में ढेरनाथ नामक स्थान पर उनकी समाधि बनी है।

गुरुजी के जाने के पश्चात् पुराने पेड़ के समाप्त हो जाने पर उसी जगह उसी तरह का रीठे का पेड़ उगा जिसमें सिद्धों की तरफ वाले रीठे अत्यन्त कड़वे व गुरुजी की तरफ वाले रीठे मीठे होते हैं आज भी यह रीठे का वृक्ष गुरुजी की अजमत की प्रत्यक्ष निशानी है। आज भी यहां आने वाले तीर्थ यात्रियों को मीठे रीठे का प्रसाद दिया जाता है।

सरदार दलजीत सिंह मान ने अपनी पुस्तक ''दर्शन एवं इतिहास गुरुद्वारा श्री रीठासाहिब गु० श्री थड़ासाहिब बागेश्वर'' में लिखा है कि सन् 1947 में हिन्दुस्तान के विभाजन के समय पाकिस्तान से निकलकर आये सिक्खों ने इस तराई इलाके को आबाद करने का बीड़ा उठाया।

पर्वतीय क्षेत्र की गरीबी और साधनों की कमी के कारण गुरुद्वारा साहिब का उचित प्रबन्ध नहीं हो पा रहा था और संगत भी कम संख्या में पहुंचते थे। सेवा व संभाल ठीक से न होती देखकर उस समय गुरुद्वारा नानकमत्ता साहिब की कमेटी ने इस स्थान की सेवा अपने हाथ में ले ली। परन्तु रीठा साहिब में जगह के अभाव एवं पंजाबी आबादी न होने के कारण वहां का विकास नहीं हो पा रहा था। सन् 1984 में महापुरुषों बाबाजी ने संगत का अनुरोध स्वीकार करके रीठासाहिब में सेवा लगा दी जो तब से निरन्तर चल रही है। रीठासाहिब के कम आबादी वाले घने जंगलों के मध्य इस स्थान की जमीन को काफी महंगे दरों में खरीद कर एक विशाल आधुनिक सुविधाओं से सुसज्जित सराय, यात्रियों के ठहरने हेतु तथा बेहद सुन्दर हरिमंदर सहिब का निर्माण कराया गया है। गुरु का लंगर तथा दिवान हाल का कार्य प्रगति पर है। बस अड्डे से गुरुद्वारा तक सड़क का निर्माण किया गया है। इसके अतिरिक्त गुरुद्वारा साहिब के साथ ही एक मनमोहक पार्क बनाया गया है। वर्तमान में कारसेवा वाले बाबा टहल सिंह, बाबा तरसेम सिंह की देखरेख के अन्तर्गत बाबा श्याम सिंह जी गुरुद्वारा साहिब एवं दर्शन ड्योढी पर संगमरमर का कार्य जोर शोर से करवा रहे है साथ ही गुरुद्वारा रीठासाहिब का प्रबन्ध सुचारू रूप से चला रहे हैं।

रीठासाहिब वर्तमान में देश विदेश के श्रद्धालुओं तथा पर्यटकों के लिये आकर्षण का केन्द्र एवं सिक्खों का प्रमुख तीर्थ स्थल है। वैसे तो यहां वर्षभर श्रद्धालुओं की आवाजाही रहती है परन्तु बैशाखी के अवसर पर यहां पर विशाल मेला लगता है। जिसमें पंथ प्रसिद्ध रागी जथे, दाड़ी जथे, पंथिक कवि एवं प्रचारक पहुंचते हैं संगत का एक विशाल समूह एकत्र होता है।

रीठासाहिब से कुछ दूरी पर नानक बाड़ी में रीठे के सैकड़ों पेड़ हैं। नदी के किनारे शैला मैय्या का मंदिर है जहां श्रद्धालु दर्शनों के लिए आते हैं। रीठासाहिब के समीप ही लगभग एक घंटे की पैदल दूरी पर वारसी गांव में पाताल रुद्रेश्वर गुफा है जो आज भी शोध का विषय बनी है। श्रद्धालुओं के लिए जलपान, भोजन की सुविधा के लिए लंगर सतत् चलते रहते हैं। सेवा कार्य के कुम्भ में तन–मन से अपना अमूल्य योगदान देकर गुरू घर की खुशियाँ प्राप्त करें और अपना जीवन सफल करें।

#æ'oj xQk ¼okjlh½

देवीधुरा से 37 किमी० दूर रीठासाहिब से उत्तर दिशा की ओर 6 किमी० की दूरी पर जब अद्भुत गुफायें होने की जानकारी मिली तो

आसपास के गांवों में कौतुहल मच गया। रुद्रेश्वर गुफा के बारे में स्थानीय लोगों से वार्ता एवं पौराणिक मान्यताओं को दृष्टिगत रखते हुए शोधार्थी शिक्षक राकेश वर्मा एवं प्रवक्ता भगवती प्रसाद जोशी जी ने वारसी की इन गुफाओं के बारे में जानकारी दी कि–लोक मान्यतानुसार पूर्व में वारसी की पहाड़ियों में बारहसिंघा जानवर पाये जाने के कारण इस स्थान का नाम वारसी पड़ा। यह भी माना जाता है कि इस क्षेत्र में वर्षा की कमी होने के कारण लोगों ने वर्षा के लिए ईश्वर की आराधना की, वर्षा–वर्षा की आराधना से इस स्थल को वारसी नाम दिया गया।

रुद्रेश्वर गुफा वारसी के बारे में बताया जाता है कि 1993 में 12 वर्षीय बालक चन्द्रमणी जोशी इस स्थल तक आया था। वह गुफा के पास एक पत्थर की आड़ में लेट गया, उसने देखा कि पहाड़ी के नीचे से एक सफेद बिल्ली बाहर आयी फिर वापस अन्दर चली गयी। बालक बिल्ली के पीछे दौड़ता हुआ अन्दर गया तो उसे अन्दर एक गुफा मिली जिसमें ऊपर से दूध की भांति कोई पदार्थ गिर रहा था। उसके नीचे शिवलिंग जैसी आकृति बनी थी, बालक गुफा की आकृतियों को निहारता हुआ गुफा में विचरण करने लगा। देर सायं तक चन्द्रमणी के घर वापस न आने से उसके परिजन काफी चिन्तित हो गये। गांव के लोग उसकी खोज में उस पहाड़ी तक पहुँचे तो गढ़ढे की अन्दर से शंख ध्वनि सुनाई दी, लोग ध्वनि की ओर चले तो गुफा के अन्दर बालक बैठा था। बालक ने गुफा के बारे में बताया कि किस प्रकार बिल्ली के पीछे–पीछे चलकर वह यहाँ तक पहुंचा।

लोगों ने वारसी गुफा में एक दूसरे से सटी पांच गुफाओं को पंच रुद्रेश्वर नाम दिया। शिवलिंग एवं शिव आराधना से संलग्न मूर्तियों की प्राकृतिक बनावट के कारण शिव के रुद्र रूप में अवतार को मानते हुए

लोगों ने इसे रुद्रेश्वर नाम दिया और एक साथ पांच गुफायें होने के कारण इसे पंच रुद्रेश्वर के नाम से प्रसिद्धि प्राप्त हुई। गुफा के अन्दर पहुंचते ही गुफा के मध्य भाग में एक विशाल चबूतरा है जिसमें अनुमानतः 500 लोग एक साथ बैठ सकते हैं। चबूतरे के पीछे एक हवन कुण्ड है इससे आगे बढ़ने पर सीढ़ियों से गुफा के गर्भ गृह तक पहुंचा जा सकता है। जहां पर लगभग 3 फुट ऊंचा शिवलिंग है जिसके चारों ओर योनिंकुड जल से भरा रहता है। शिवलिंग के ऊपर प्राकृतिक रूप से बने शेषनाग के फन से जलधारायें शिवलिंग पर गिरती रहती हैं। लिंग के वाम भाग में मां पार्वती, नंदी एवं अन्यान्य देवगणों की अनेक आकृतियां बनी हुई हैं। शिव से ही संबंधित त्रिशूल, रूद्राक्ष, शंख नाग आदि की आकृतियां बनी हुई है। नवरात्रि की नवमी को ग्रामीणों द्वारा इसकी प्राण प्रतिष्ठा कर इसे रूद्रेश्वर नाम दिया गया। शेषनाग की आकृति से शिवलिंग पर पांच धाराओं में जलधारायें गिरती है। इसे पंचधारा कहा जाता है। शिवलिंग के पूर्वी भाग में बड़े वेग से जलधारा प्रवाहित होने की आवाज सुनाई देती है। जिसे गुप्त गंगा नाम दिया गया है। इस गुफा के आस–पास चार अन्य गुफायें हैं जिसमें पहली गुफा को सरोवर गुफा का नाम दिया गया है। जिसके अंदर एक बड़ा सा तालाब है लगभग 30 × 8 मीटर के क्षेत्र में यह गुफा फैली है।

दूसरी गुफा को पंचदेव गुफा नाम दिया गया है, इसके अन्दर अनेक देवी, देवताओं की प्राकृतिक मूर्तियां बनी हुई हैं। बताया जाता है कि गुफा के भीतर मां बाराही धाम तक जाने का रास्ता है जो अभी खोज का विषय है। तीसरी गुफा को भैरव गुफा के नाम से जाना जाता है। माना जाता है कि यहां शिव के विशेष गण भैरव ने साधना की है। चौथी गुफा को गणेश गुफा का नाम दिया गया है। इसमें प्राकृतिक रूप से एक आसन बना हुआ है। ग्रामीणों के अनुसार आज से कुछ वर्षो पहले दो साधुओं ने गुफा के अन्दर रहकर दो तीन वर्षों तक साधना की। गांव की ही एक संस्था द्वारा इसके विकास के लिए आर्थिक सहायता दी गई। इसे प्रचारित–प्रसारित किया गया पूर्व जिलाधिकारी गोपाल कृष्ण द्विवेदी सहित कई प्रशासनिक अधिकारी गुफा तक पहुंचे हैं। रुद्रेश्वर तक पहुंचने के लिए बाराही मंदिर देवीधुरा से वारसी तक मोटर मार्ग से 15 किमी० ढोलीगांव तक पक्की सड़क है ढोलीगांव से 22 किमी0 कच्ची सड़क बनी है, 37 किमी० की यात्रा के बाद लगभग 300 मीटर पैदल रास्ता है। दूसरी ओर रीठासाहिब से लगभग डेढ़ घण्टे का पैदल रास्ता है। जो घने

निर्जन वनों तथा नदी नालों के होकर गुजरता है। हर वर्ष शिवरात्रि के दिन यहां एक विशाल मेले का आयोजन किया जाता है। जिसमें निकटस्थ विद्यालयी छात्र–छात्राओं की विभिन्न सांस्कृतिक एवं खेलकूद प्रतियोगिताएं कराई जाती है। आस–पास के ग्रामीणों द्वारा हर्षोल्लास के साथ देवपूजा के साथ–साथ मेले में प्रतिभाग किया जाता है।

सुंदर मनोहारी विशाल पहाड़ियों के मध्य स्थित यह स्थल पर्यटकों, प्रकृति प्रेमियों एवं शोधकर्ताओं के लिए अति महत्वपूर्ण है। प्राकृतिक देवस्थल वारसी जनपद की प्रमुख विरासतों में है। फरवरी–मार्च में रीठासाहिब में जब मेला लगता है तो पर्यटकों की आवाजाही इस स्थल की ओर बढ़ जाती है। फिर वर्ष भर यह अद्भुद अमूल्य धरोहर पर्यटकों की बाट जोहती है।

धार्मिक, पर्यटन, योग, ध्यान, साहसिक पर्यटन की अपार संभावनाओं के बावजूद पक्की सड़क न बन पाने से इस प्राकृतिक स्थल तक लोगों की पहुंच कम है। आवश्यकता है इसके समुचित विकास एवं व्यापक प्रचार–प्रसार की ताकि आम–जनमानस को इस अद्भुद प्राकृतिक देव स्थल की जानकारी हो सके और यहां तक आवागमन आसान हो सके।

foodkun vkJe ';keykrky

सूखीढ़ांग (बृजनगर) से 06 किलोमीटर की दूरी पर घने बांज, बुरांश, साल, चीड़ के वृक्षों से घिरा यह अति रमणीक स्थल जनपद का प्रमुख दर्शनीय स्थल है। चम्पावत–टनकपुर राष्ट्रीय राजमार्ग में सूखीढ़ांग (बृजनगर) से 01 मिलोमीटर की दूरी पर बांयी ओर श्यामालाताल के लिए सड़क मार्ग निर्मित हैं। सड़क से 5 किलोमीटर की दूरी पर अति आकर्षक प्राकृतिक झील है झील के चारों ओर पर्वतीय एवं मैदानी दोनों प्रकार की जलवायु के वृक्ष इसकी रमणीकता को और अधिक मनमोहक बना देते हैं। झील से लगभग 500 मीटर की ऊंचाई में स्वामी विवेकानन्द आश्रम स्थित है। चारों ओर से देवदार, चीड़, साल, बांज, बुरांश के वृक्षों घिरा यह स्थल अति मनमोहक है। निर्जन वन क्षेत्र में स्थित आश्रम के आस पास पर्वतीय एवं मैदानी दोनों प्रकार की जलवायु के वृक्ष हैं। आश्रम परिसर में आते ही अलौकिक आनन्द की अनुभूति होती है। आश्रम के सन्त स्वामी राम महाराज जी ने आश्रम के बारे में महत्वपूर्ण जानकारियां दी, स्वामी जी ने बताया कि स्वामी विवेकानन्द जी इस मार्ग से चले थे। मायावती आते समय वह काठगोदाम से देवीधुरा मार्ग से

लोहाघाट आये थे और लौटते समय चम्पावत द्यूरी–चल्थी–सूखीढ़ांग मार्ग से टनकपुर पहुचे थे। टनकपुर में उन्होंने रात्रि विश्राम किया था। 1914 में स्वामी विवेकानन्द के शिष्य स्वामी विरजानन्द हिमालय में ध्यान के लिए एक आदर्श स्थल की तलाश में निकले तो यह स्थल उन्हें सबसे शान्त एवं चित्तवर्धक लगा।

स्याला नामक यह स्थल सूनसान निर्जन वन क्षेत्र था यहां पर एकमात्र एक गरीब किसान की झोपड़ी थी जो ऋण न चुका पाने से निराश था। उसने अपनी जीर्ण शीर्ण झोपड़ी और जंगल स्वामी विरजानन्द जी को सात सौं रु० की धनराशि में बेच दिया। सेवियर नामक एक अंग्रेज महिला ने स्वामी विरजानन्द को यह झोपड़ी खरीदने में मदद की एवं विवेकानन्द जी के नाम से आश्रम का निर्माण किया, रामकृष्ण मिशन और रामकृष्ण मठ के छठे अध्यक्ष स्वामी विरजानन्द जी द्वारा इस निर्जन वन क्षेत्र में आश्रम स्थापित कर गरीबों और असहायों की सेवा का कार्य इस स्थल से प्रारम्भ किया, माना जाता है कि स्वामी विरजानन्द जी ने स्याला गांव और उसके निकट आर्कषक झील (ताल) के सम्मिलित नाम को ''श्यामलाताल'' नाम दिया।

श्यामलाताल नाम से प्रसिद्ध इस स्थान पर स्वामी विरजानन्द जी ने तपस्या की थी। घने निर्जन वन क्षेत्र में स्थित यह स्थल प्रारम्भिक से ही आध्यात्मिक केन्द्र रहा। मायावती आश्रम की भांति यह आश्रम भी बैलूर मठ कोलकाता द्वारा संचालित है। आश्रम में चिकित्सालय एवं पुस्तकालय संचालित है। स्थानीय जनों को निःशुल्क चिकित्सा सेवा उपलब्ध कराई जाती है तथा विद्यालयी बच्चों को आश्रम द्वारा निःशुल्क पुस्तकों का वितरण किया जाता हैं आश्रम परिसर में एक मन्दिर है जिसमें प्रातः सांय पूजा अर्चना होती है।

इस स्थल से टनकपुर–बनबसा और शारदा नदी घाटी के अत्यन्त मनोरम दृश्य, दृष्टिगोचर होते हैं। आश्रम के पृष्ठ भाग से हिमायल की प्रमुख चोटियाँ नंदादेवी, पंचाचूली, नंदाकोट आदि के साथ–साथ नेपाल के विहंगम दृश्य दिखाई देते हैं।

पर्यटन एवं आस्था के इस मनमोहक स्थल की आकर्षकता अविस्मरणीय रहेगी, मुख्य मार्ग से आश्रम तक उचित यातायात व्यवस्था झील का सौन्दर्यीकरण इस स्थल की रमणीकता को और रमणीक बना देगा और श्यामलाताल जनपद में ही नहीं अपितु उत्तराखण्ड के प्रमुख दर्शनीय स्थलों में शुमार होगा।

i|p'oj

लोहाघाट नगर से 40 किलोमीटर की दूरी पर जनपद का धार्मिक एवं पर्यटन स्थल पंचेश्वर स्थित हैं। काली, गोरी, धौली, सरयू तथा रामगंगा पांच नदियों का संगम स्थल होने के कारण यह स्थल पंचेश्वर नाम से प्रसिद्ध है। पौराणिक मान्यतानुसार महाभारत काल में पाण्डवों ने पांच नदियों के इस संगम स्थल पर अपना देह विसर्जन किया था। पंचेश्वर नदी जनपद चम्पावत–पिथौरागढ़ एवं भारत–नेपाल की सीमा है। नदी के एक ओर भारत व दूसरी ओर नेपाल का क्षेत्र है। उत्तरायणी अवसर पर यहां आयोजित होने वाले उत्सव में भारत एवं नेपाल की संस्कृति का भी संगम होता है। उत्तरायणी पर्व पर पंचेश्वर स्नान की पौराणिक मान्यता है और सदियों से उत्तरायणी पर्व के दिन यहां पर जनपद चम्पावत, पिथौरागढ़ तथा नेपाल के सीमावर्ती गई गांवों के लोग सम्मिलित होते हैं। इस अवसर पर काली तथा सरयू नदी से संलग्न प्रत्येक घर में त्यौहार मनाया जाता है। इस त्यौहार में एक विशिष्ट भोजन बनाने की परम्परा है। जिसमें चावल के आटे से ''सेल'' तथा ''मांड़े'' बनाये जाते हैं। पंचेश्वर में शिव चौमू रूप में स्थापित हैं। उत्तरायणी पर्व पर स्नान के बाद चमू देवता का पूजन किया जाता है। चमू देवता के मंदिर के साथ–साथ यहां पर कई अन्य पूजित देवताओं के भी मंदिर स्थापित है।

पौराणिक मान्यता एवं अगाध आस्था का यह केन्द्र जनपद का एक महत्वपूर्ण पर्यटन स्थल भी है। पंचेश्वर का घाट महाशीर मत्स्य आखेट के लिए प्रसिद्ध है। पंचेश्वर में अंतर्राष्ट्रीय मत्स्य आखेट प्रतियोगिता आयोजित की जाती है। इस प्रतियोगिता में देश विदेश के प्रतियोगी सुनहरी महाशीर को पकड़ते हैं और उसका वजन तोलकर उसे पुनः नदी में छोड़ देते हैं। मत्स्य आखेट के अतिरिक्त यह स्थल रिवर राफ्टिंग के लिए उपयोगी सिद्ध हुआ है। घाट से पंचेश्वर तक लगभग 20–25 किलोमीटर की दूरी पर साहसिक खेल रिवर राफ्टिंग में जनपद के युवा प्रतिभाग करते हैं जो जनपद का अति आकर्षण का केन्द्र है। रिवर राफ्टिंग व मत्स्य आखेट प्रतियोगिताओं के आयोजन में स्थानीय युवक मंगल दल, जिला पंचायत एवं जिला प्रशासन द्वारा सहयोग किया जाता है एवं खेलों को रोचक तथा आकर्षक बनाने के लिए समुचित व्यवस्थाऐं की जाती हैं। नेपाल तथा भारत सरकार के मध्य कई दौर की वार्ताओं के

बाद पंचेश्वर बांध निर्माण के लिए यह स्थल बार–बार चर्चा का विषय भी बना रहता है। किन्तु बांध निर्माण की प्रक्रियायें हवाई साबित हुई हैं। जनपद मुख्यालय से लगभग 55 किलोमीटर की दूरी पर स्थित पंचेश्वर धाम को पर्यटन की दृष्टि से विकसित किये जाने की असीम सम्भावनायें हैं।

,cV ekmV

लोहाघाट–पिथौरागढ़ सड़क मार्ग पर लोहाघाट नगर से 06 किलोमीटर की दूरी पर घने देवदार वनों के मध्य एक छोटा सा कस्बा है मरोड़ाखान। यह स्थान टनकपुर अस्कोट पैदल मार्ग का एक पड़ाव रहा है। यहां से घाट तक आज भी इस पैदल मार्ग से आवागमन होता है। मरोड़ाखान से 02 किलोमीटर की उंचाई पर बांज बुरांश के घने जंगलों के मध्य अति रमणीक ऐबटमाउंट स्थित है। यह ऐतिहासिक स्थल अंग्रेजी शासन काल से काफी चर्चित रहा है। बताया जाता है कि एक अंग्रेज अधिकारी ने यहां की जलवायु और अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य से प्रभावित होकर यहां पर अपना आवास (कॉटेज) बनाया, ऐबट नाम के इस अंग्रेज अधिकारी के नाम पर इस पहाड़ी का नाम ऐबट–माउंट पड़ा। ऐबटमाउंट आवास के बाद ऐबट ने मरोड़ाखान में डाकघर बनवाया, बताया जाता है कि यह डाकघर इस क्षेत्र का सबसे पुराना डाकघर है। ऐबट द्वारा अन्य अंग्रेज अधिकारियों को भी यहां बसाने का प्रयास किया गया। लेकिन उस समय सड़क की सुविधा न होने के कारण इस स्थल पर अधिक आबादी की बसासत नहीं हो सकी यदि सड़क की सुविधा होती तो शायद यह स्थल अधिक आबादी वाला होता।

ऐबटमाउंट घने बांज–बुरांश के वृक्षों एवं झुरमुटों के मध्य उंची पहाड़ी पर स्थित है। मरोड़ाखान से ऐबटमाउन्ट तक पक्का सड़क मार्ग निर्मित हैं। विशुद्ध पर्यावरण, अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य एवं अलौकिक शांति का यह स्थल अति लोक लुभावन है। पुरातन आकर्षक भवनों–खण्डहरों से प्रतीत होता है कि यह अति महत्वपूर्ण स्थल रहा है। आज भी यहां पर अति महत्वपूर्ण (वी०आई०पी०) लोगों के आवास (बंगले) हैं। पर्यटन की दृष्टि से विकसित किये जाने के उद्देश्य से इस स्थल पर पर्यटन विभाग द्वारा एक विशेष प्रकार की लकड़ी से आकर्षक आवास (कॉटेज) निर्मित किये जा रहे हैं।

ऐबट माउंट के कुछ ही क्षण काफी रोमांकित करते हैं। यहां से लोहाघाट, मायावती, बाणासुर किला आदि दर्शनीय स्थलों का नजारा हो

या फिर रेगड़ू, घाट थलकेदार से हिमालय की तलहटी तक श्रृंखलाबद्ध पहाड़ियों का दृश्य या फिर पहाड़ी के समानान्तर बसे बाराकोट और आस–पास के गांवों का दृश्य काफी मनमोहक लगता है। आनन्ददामी वातावरण में शांतिपूर्वक कुछ क्षण गुजारने यहां पर पर्यटकों का आवागमन वर्ष भर रहता है। ग्रीष्मकाल में पर्यटक यहां की ठंडी हवाओं का लुत्फ लेते हैं। तो शीतकाल में बर्फ से लक–दक मनभावन नजारों का, ऐतिहासिक स्थल ऐबटमाउंट जनपद का एक प्रमुख दर्शनीय स्थल है।

,dgfFk;k ukyk

चम्पावत नगर से पश्चिमोत्तर दिशा में नगर से लगभग 4 किमी० की दूरी पर ढ़कना गांव स्थित है। ढ़कना गांव तक सड़क–मार्ग का निर्माण किया गया है। ढ़कना से लगभग 2 किलोमीटर की दूरी पर पुरातात्विक एवं ऐतिहासिक एकहथिया नौला है। एक हाथ से निर्मित होने के कारण नौले को एकहथिया नौला नाम दिया गया। चम्पावत से मायावती पैदल मार्ग में यह स्थल चंडालकोट के पृष्ठ भाग में स्थित है। लोकमान्यता है कि कुमाऊ की स्थापत्य कला के लिए प्रसिद्ध बालेश्वर मन्दिर का निर्माण करने वाले मिस्त्री जगन्नाथ का एक हाथ चन्द शासकों ने कटवा दिया ताकि बालेश्वर सरीखी कृतियां अन्य कहीं न बन सकें। सूचना एवं लोक सम्पर्क विभाग चम्पावत द्वारा प्रकाशित विकास पुस्तिका 2008 में वर्णित उक्त लोकमान्यता चम्पावत में सर्वमान्य है। बताया जाता है कि नौले में प्रयुक्त पत्थरों में कलाकृतियां उभारने एवं पत्थरों को यथास्थान स्थित करने में कलाकार ने अपनी पुत्री की सहायता ली। घने बांज, बुराश के वृक्षों एवं सघन झुरमुटों के मध्य पानी की बावड़ी (नौला) को अति आकर्षक रूप दिया गया है। नौले पर लगे पत्थरों पर लोक जीवन के विभिन्न दृश्यों, नर्तक, वादक, गायक, कामकाजी महिलाओं आदि का सजीव चित्रण प्रभावपूर्ण ढंग से किया गया है। कला कि दृष्टि से यह कुमाऊँ की बेजोड़ कलाकृतियों में से एक है। यह ऐतिहासिक स्थल जनपद चम्पावत के प्रमुख्य दर्शनीय स्थलों में से एक है।

❑❑

3

प्रमुख धार्मिक स्थल

i.kkfxfj efUnj

मैदानी क्षेत्र से पर्वतीय जनपद चम्पावत के प्रवेश द्वार टनकपुर के निकट अन्नपूर्णा शिखर पर स्थित माँ पूणागिरि धाम उत्तर भारत के प्रमुख तीर्थ स्थलें में से एक है टनकपुर से चम्पावत की ओर 01 किलोमीटर आगे ककराली गेट से पूर्णागिरि धाम के लिए सड़क मार्ग निर्मित है। टनकपुर से लगभग 20 किलोमीटर की दूरी पर ऊंची चोटी पर स्थित अगाध आस्था का यह स्थल टनकपुर के प्रत्येक छोर से दृष्टिगत होता है।

पूर्णागिरि शक्ति पीठ, देवी के इक्यावन शक्ति पीठों में से एक है। इस पवित्र स्थली के दर्शन मात्र से ही श्रद्धालुओं की मनोकामनाएं पूर्ण हो जाती है। इसलिए यहां निरंतर भक्तों का आवागमन होता रहता है।

पूर्णागिरि में शक्ति पीठ स्थापना के संबंध में कहा जाता है कि पौराणिक काल में हरिद्वार के समीप कनखल में दक्ष प्रजापति का बहुत बड़ा यज्ञ हुआ था। पिता दक्ष के यज्ञ में अपने पति शिव को उचित स्थान न दिये जाने से रुष्ट होकर सती ने अग्निकुंड में अपने प्राणों की आहुति दे दी। क्रोधित होकर भगवान शंकर ने सती का शव अपने कंधे पर रखा और विश्व विचरण करने लगे। भगवान शिव के इस रौद्र रूप को देखकर देवता भयभीत हो गये। तब विष्णु ने सुदर्शन चक्र से शिव के कन्धे पर रखी देवी सती के टुकड़े–टुकड़े कर डाले। टनकपुर शहर से सलंग्न पर्वत चोटी के मध्य अन्नपूर्णा शिखर पर देवी सती की नाभि गिरी। जो पूर्णागिरि शक्ति पीठ के रूप में स्थापित हुआ।

मनोकामना पूर्ण करने वाली देवी की अलौकिक शक्ति का ही चमत्कार है कि देश के कोने–कोने से ही नहीं अपितु पड़ोसी देश नेपाल से हजारों श्रद्धालु माँ के दर्शन के लिए पूर्णागिरि पहुंचते हैं।

पूर्णागिरि यात्रा के लिए पहला पड़ाव टनकपुर को माना जाता है टनकपुर के पवित्र शारदा घाट पर स्नान से शुद्धि के बाद ही श्रद्धालु माँ के दर्शन के लिए प्रस्थान करते हैं यहां से राज्य परिवहन निगम तथा अन्य

वाहनों द्वारा ठूलीगाड़ होते हुए भैरव मंदिर तक 12 किलोमीटर का मार्ग सड़क द्वारा तय किया जाता है। लगभग तीन किलोमीटर की यात्रा पर पैदल चलना पड़ता है। यह यात्रा मार्ग प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर तथा अति मनोहारी है। इस मार्ग पर माँ का जयकारा करते हुए वर्ष भर तीर्थयात्रियों का आवागमन बना रहता है। किन्तु होली के पश्चात् तो इस यात्रा पर भक्तों का सैलाव ही उमड़ पड़ता है। चैत्र मास के नवरात्रों पर आगंतुक भक्तों की भीड़ और भी बढ़ जाती है।

पूर्णागिरि की यात्रा पूर्व में बड़ी विकट थी। लोक आस्था के बल पर यात्रा को पुण्यदायी मानते हुए देवी की जोखिमपूर्ण यात्रा करते थे। श्रद्धालु पहले देवी के मार्ग में प्राकृतिक रूप से उगने वाली बाबड़ घास को पकड़कर उसके सहारे यात्रा करते थे। तत्पश्चात महाराजा मैसूर के प्रयास से कुछ मार्ग चलने योग्य बना। स्वतंत्रता के पश्चात् ठा० किशन सिंह चंद ने छः फुट चौड़ा मार्ग निर्माण और खतरनाक स्थलों पर लोहे की रैलिंग बनवाकर यात्रा को सुगम बनाने का प्रयास किया।

जनपद चम्पावत का यह प्रमुख धार्मिक स्थल है। जनपद वासियों में माँ पूर्णागिरि के प्रति अगाध आस्था एवं विश्वास है। जनभावनाओं एवं श्रद्धालुओं की अपार श्रद्धा को दृष्टिगत रखते हुए विगत वर्षों से जिला पंचायत, जिला प्रशासन चम्पावत द्वारा पूर्णागिरि मेले को भव्य रूप देने एवं तीर्थयात्रियों की सुविधा के लिए सराहनीय प्रयास किये जा रहे हैं। हालांकि अप्रत्याशित जनसैलाब के पहुंचने से श्रद्धालुओं को कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। टनकपुर से पूर्णागिरि की तीर्थयात्रा का प्रथम पड़ाव ''ठुलीगाड़'' है। जहां पर प्रशासन द्वारा अस्थाई कार्यालयों (कैम्प कार्यालयों) के माध्यम से यात्रियों के चिकित्सा, स्वास्थ्य, पेयजल आदि की समुचित व्यवस्था की जाती है तथा अग्रिम यात्रा की जानकारी दी जाती है। ठुलीगाड़ यात्रा विश्राम का मुख्य केन्द्र है ठुलीगाड़ के बाद दूसरा गधेरा (गाड़) लादीगाड़ कहलाती है। लादी बकरे के आमाशय को कहा जाता है। लोकमान्यता है कि माँ पूर्णागिरि द्वारा टुन्यास में टुली नामक राक्षस का वध कर उसका आमाशय इसी गाड़ में बहाया था। आज भी काली मन्दिर में बलि दिये गये बकरों का आमाशय इसी गाड़ में बहाया जाता है। आगे मार्ग में मन्दिर पहुंचने तक अनेक मन्दिर स्थित हैं। जिनके दर्शन करते हुए श्रद्धालुओं को अपने पैदल यात्रा का आभास भी नहीं होता। आगे चलकर टुन्यास को

इन्द्रभवन भी कहा जाता है। यहां पर रात्रिविश्राम का पौराणिक महत्व बताया गया है। इसी स्थान पर प्रसिद्ध ''झूठे का मन्दिर'' है। जनश्रुति है कि किसी धनी व्यक्ति ने मां से पुत्र प्राप्ति की मनोकामना की और मनोकामना पूर्ण होने पर सोने का मन्दिर चढ़ाने का वचन दिया किन्तु पुत्र प्राप्ति के बाद उसने ताबें पर सोने का पानी चढ़ाकर नकली सोने की मूर्ति चढ़ाने का प्रयास कियां यहां पर उस नकली सोने की मूर्ति को जमीन से कोई उठा नहीं सका। अन्त में इसी स्थान पर इसे प्रतिस्थापित किया गया मां की अगाध शक्ति का इसे प्रतीक माना जाता है। पक्के कंक्रीट मार्ग पर रास्ते के किनारे लगे लोहे के नलों के सहारे–सहारे भीड़ के साथ चढ़ते हुए माँ पूर्णागिरि धाम (नाभिस्थल) तक पहुंचकर श्रद्धालु अपार शांन्ति एवं सुकून महसूस करते हैं। रोमांचक यात्रा के बाद मां के मन्दिर पहुंचकर वास्तविक दर्शनों की अनुभूति होती है।

पूर्णागिरि माँ के दरबार के सामने इससे अधिक ऊँची चोटी है। जिस पर चढ़ना असम्भव प्रतीत होता है। लोकमान्यता है कि इस चोटी पर एक साधु ने अपना आसन जमा रखा था जो देवी के श्रृंगार पर दृष्टि रखता था। माँ पूर्णागिरि ने इसे इस स्थान से नीचे शारदा नदी के पार नेपाल में फेंक दिया था। यही साधु सिद्धबाबा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। पूर्णागिरि तीर्थयात्रा के बाद सिद्धबाबा के दर्शन को भी आध्यात्मिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण बताया गया है।

उत्तर भारत के प्रसिद्ध तीर्थों में से एक पूर्णागिरि धाम जनपद का प्रमुख तीर्थ स्थल है। माँ के प्रति अगाध आस्था एवं विश्वास के साथ जनपद के कोने–कोने से वर्ष भर पूर्णागिरि में पूजा–अर्चना के लिए श्रद्धालुओं की आवाजाही बनी रहती है।

cky'oj efnj pEikor

जनपद मुख्यालय चम्पावत नगर के समीप बस स्टेशन से लगभग 100 मीटर की दूरी पर स्थित बालेश्वर मंदिर चित्ताकर्षक शिल्पकलाओं के लिए कुमाऊं में ख्याति प्राप्त है। अति आकर्षक कलाकृतियों से परिपूर्ण बालेश्वर मन्दिर के लगभग 200 वर्ग मीटर परिसर में अनेक आकर्षक मन्दिर बने हैं। मुख्य मंदिर में शिव लिंग स्थित है। मुख्य मंदिर के सम्मुख ही दूसरे मंदिर में गुम्बदाकार छत से जलपात्र जमीन से कुछ उंचाई तक लटकता हुआ स्थित है। जिससे जल की बूदें शिव लिंग पर अर्पित की जाती है। मंदिर परिसर में स्थित सभी मंदिरों की दीवारों पर लगभग

समान रूप से पत्थरों पर उकेरी गई कलाकृतियाँ स्वतः ही अपनी ओर आकर्षित करती हैं। जमीन से उपर की ओर प्रथम पंक्ति में हाथियों के जोड़े द्वितीय पंक्ति में काम कलाओं का अदभुत चित्रण किया गया है एवं शीर्ष पंक्तियों में हिन्दू देवी देवताओं की मूर्तियों का चित्रांकन सजीव प्रतीत होता है। मंदिर के पुजारी श्री भैरव गिरि महन्त एवं पुरात्तव विभाग के पवन गिरी महन्त बताते हैं कि मुख्य रूप से यह शिव मंदिर है। शिव पूजन ही यहां पर प्रमुखता से होता है। किन्तु परिसर में स्थित अन्य मंदिरों–कालिका मंदिर, चम्पादेवी, भैरव मंदिर के प्रति भी नगर वासियों में अगाध आस्था है। मंदिर परिसर में खण्डित शिलाओं को एकत्रित कर रखा गया है। मुख्य मंदिर के गुम्बद का पुनर्निर्माण कर मंदिर की भव्यता को बनाये रखने का प्रयास किया है खण्डित शिलाओं को देखकर प्रतीत होता है कि पूर्व में यहां पर कई मंदिरों का समूह रहा होगा। उपलब्ध ताम्र पत्रों में अंकित विवरणों के अनुसार इसका निर्माण काल सन् 1272 ईसवी माना जाता है। लोकमान्यता है कि महाभारत काल में बाली द्वारा यहां पर असुरों से सुख शान्ति के लिए शिव पूजन किया गया जिससे इसे बाली + ईश्वर – बालेश्वर नाम दिया गया। मंदिर समूह में मंदिरों की छतें आर्कषक गुम्बदाकार रूप में बनी है। दीवारों के साथ–साथ छत पर निर्मित कलाकृतियाँ तत्कालीन अद्वितीय शिल्प कला से परिचित कराती है। आधार से लेकर शिखर तक प्रत्येक शिला पर सूक्ष्मता से उकेरी गई कलाकृतियाँ धार्मिक अभिप्राय को व्यक्त करती है। बालेश्वर मन्दिर का निर्माण कत्यूरी शासन काल में माना जाता है और इसके जीर्णोधार के सम्बन्ध में जनश्रुति है कि राजा रुद्र चंद के समय राज्य में प्राकृतिक संकट उत्पन्न हो गए थे तभी मंदिर के निकट रह रहे साधु ने भविष्यवाणी की कि–राज्य का संकट तभी दूर होगा जब बालेश्वर मंदिर के निकट ही महादेव का मंदिर बना दिया जाए। कालांतर में सन् 1420 में राजा ध्यानचंद ने अपने पिता ज्ञान चंद के पापों से प्रायश्चित के लिए बालेश्वर मंदिर का जीर्णोद्वार कराया।

मंदिर समूह के निर्माण में बलुवा तथा ग्रेनाइट की तरह के पत्थरों का प्रयोग किया गया है। मूलतः शिखर शैली पर निर्मित बालेश्वर मंदिर ठोस चिनाई के जगत पर आधारित है। सम्भवतः यह दोहरा मंदिर था। गर्भगृह तथा मंडप की छतों पर कालिया मर्दन अंकित हैं बाहरी दीवारों पर ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा अन्य देवी–देवताओं का अंकन किया गया है।

बालेश्वर मंदिर परिसर में ही स्थित चंपावती देवी मन्दिर भी नगर वासियों की अगाध आस्था का केन्द्र है। किंवदंति है कि चंपावती देवी कत्यूरों की अंतिम संतान थी। जिसका विवाह इलाहाबाद के निकट झूंसी के निवासी सोम चंद से हुआ था। चंपावती के नाम से ही चंपावत नगर बसा। अन्य लोकमत है कि सूर्यवंशी राजा अर्जुनदेव ने काली कुमाऊं का यह क्षेत्र अपनी कन्या चंपावती को दान में दिया था।

कहा जाता है कि चंपावती देवी चरित्रवती, साहसी तथा अद्‌भुत वीरांगना थी। राजा की अनुपस्थिति में उसने कई क्षेत्र युद्ध लड़कर जीत लिए थे। उसकी मृत्यु के पश्चात चंद राजाओं ने उसकी स्मृति में एक सुंदर प्रस्तर मूर्ति बनाकर 'बालेश्वर' मंदिर में उत्तर–पश्चिम कोने में स्थापित की। मूर्ति स्थापना का काल चौदहवीं, पंद्रहवी शताब्दी के मध्य बताया जाता है।

चंपावती देवी की प्रतिमा के हाथ में कटार तथा त्रिशूल है। उसके समीप ही एक सिंह बैठा हुआ है। चंपावती को अपनी कुलदेवी मानते हुए, साह लोग उसकी पूजा करते थे। किन्तु अब पुजारी द्वारा ही पूजा–अर्चना की जाती हैं नेपाली श्रद्धालु भी इसके दर्शनों के लिए आते हैं। चंपावती देवी की पूजा, दुर्गापूजा के समान ही की जाती है। जिसमें दुर्गा, सप्तशती का पाठ होता है। भेंट के रूप में घाघरा, पिछौड़ा तथा सुहाग की सामग्री भेंट की जाती है।

बालेश्वर मंदिर के समीप ही स्थित पानी के नौले (बावड़ी) का निर्माण भी बड़े कलात्मक ढंग से किया गया हैं नौले के द्वार के दोनों ओर समान रूप से आकर्षक कलाकृतियाँ पत्थरों पर उकेरी गई हैं। बाहरी दीवारों के साथ–साथ नौले के अन्दर चारों ओर दीवारों पर देवी देवताओं के आकर्षक चित्र बनाये गये है। शिल्प कला की यह अदभुत मिशाल है। नौले के जल पर दीवारों के आकर्षक चित्रों की छाया उसके जल की गहराई को संदिग्ध कर देती है। अनुपम कलाकृतियों से सजे इस नौले का पवित्र जल तल्लीहाट निवासियों के पेयजल की पूर्ति करता है तथा पूजा अर्चना से पूर्व देव स्नान कराये जाने के लिए इस नौले के जल को पवित्र माना जाता है।

बालेश्वर मंदिर परिसर उत्तराखण्ड के राष्ट्रीय संरक्षित स्मारकों में से एक है। भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण देहरादून मण्डल द्वारा इसकी देख–रेख के लिए कर्मचारी नियुक्त किये गये हैं। पुरातत्व विभाग की

देख–रेख में बालेश्वर मंदिर परिसर की स्वच्छता एवं प्रसिद्ध बालेश्वर नौले के निर्मल जल को संरक्षित किया गया है। मंदिर के पुजारी भैरव गिरी महन्त द्वारा मंदिर में नियमित पूजा अर्चना सम्पादित कराई जाती है।

मनमोहक शिल्प कला के लिए प्रसिद्धि के साथ–साथ बालेश्वर मंदिर चम्पावत नगर में आयोजित होने वाले नन्दा–सुनन्दा महोत्सव का आयोजन स्थल है। अमर उजाला के पत्रकार चन्द्र शेखर जोशी जी एवं सतीश जोशी जी बताते है कि भाद्रपद की अष्टमी को कुमाऊं में नन्दाष्टमी के रूप में मनाया जाता है। कुमाऊं के मुख्य नगरों नैनीताल, अल्मोड़ा, रानीखेत आदि में इस दिन नन्दा–सुनन्दा मेले का आयोजन किया जाता है। जनश्रुति है कि नन्द राजा की दो बहिने नन्दा–सुनन्दा देवी के मंदिर जा रही थी। मार्ग में भैसे के रूप में आकर एक राक्षस ने उन्हें परेशान किया। अपने प्राणों की रक्षा के लिए दोनों बहिने केले के पेड़ों के बीच छिप गई, जब भैंसा उन्हें मारने को पहुंचा तो माँ भगवती ने प्रकट होकर भैसे का संहार कर दोनों बहिनों की रक्षा की।

नन्दाष्टमी कुमाऊं के प्रमुख पर्वों में से एक है। चम्पावत में नन्दा–सुनन्दा पर्व एक महोत्सव के रूप में मनाया जाता हैं कदली वृक्ष (केले का वृक्ष) और नन्दा सुनन्दा का डोला मंदिर में सजाया जाता है हजारों की संख्या में श्रद्धालु नन्दा सुनन्दा की पूरे नगर में परिक्रमा कराते है। बालेश्वर मंदिर से नन्दा–सुनन्दा यात्रा प्रारम्भ होकर बस स्टेशन, ज्ञालीसेरान होते हुए नागनाथ मंदिर पहुंचती हैं। जहां पर पूजा अर्चना के साथ देव डांगर श्रद्धालुओं को आशीर्वचन देते है। नागनाथ मंदिर से मल्लीहाट, तल्लीहाट होकर यात्रा पुनः बालेश्वर मंदिर पहुचंती है। जहां पर नन्दा सुनन्दा के डोले को विश्राम दिया जाता है। इस पावन पर्व पर जनपद का विशाल जनसमूह चम्पावत में महोत्सव मनाता है। रात्रि में माँ नन्दा सुनन्दा को श्रद्वापूर्वक महाभोग लगाया जाता है। अगले दिन नवमी को कन्या पूजन का आयोजन होता है और दशमी के दिन शुभमुहूर्तानुसार देवी को विदाई दी जाती है। अपार जन समुदाय के हर्षोलास का यह पर्व चम्पावत के चन्द शासन काल के राजशाही चहल–पहल के दिनों की अनुभूति कराता है।

fgXyknoh efnj

चम्पावत–खेतीखान मोटर मार्ग में चम्पावत शहर से 5 किमी० दूर ललुवापानी से 2 किमी० की ऊँचाई में माँ हिंग्लादेवी का मंदिर स्थित है।

अटूट श्रद्धा के इस मंदिर के बारे में बताया जाता है कि हिंग्ला देवी शक्ति पीठ विश्व में मात्र तीन स्थानों में स्थित हैं। पाकिस्तान, गुजरात एवं चम्पावत। मानसखण्ड में देवी शक्तिपीठ को महिमामंडित किया गया है। चन्द शासन में सिमल्टा के पांडेय (जो अब पबेत में बसे हैं) लोगों को इस मंदिर में पूजा के लिए पुजारी अधिकृत किया गया था। आज भी मंदिर में पबेत के पांडेय लोग पुजारी हैं। जो नौकरी पेशे के बावजूद भी माँ की सेवा के लिए तत्पर रहते हैं। इस मन्दिर में जिस शिला का पूजन किया जाता है बताया जाता है कि उसकी आकृति चंपावत शहर की प्राकृतिक आकृति के समान है हालांकि इसे देखा नहीं जा सकता शिला ओढ़नी (चुनरी) से ढ़की रहती है। ऊंची चोटी में स्थित इस मंदिर से चम्पावत का मनोरम दृश्य दिखाई देता हैं। दूसरी ओर जनपद चंपावत के कई दर्शनीय स्थलों के दृश्य यहां से दिखाई देते हैं। माँ के प्रति जनपद के लोगों में अगाध श्रद्धा एवं विश्वास है यही कारण है कि आज तक इस क्षेत्र के लोग दैवी आपदा से सुरक्षित हैं। आज भी आस–पास के गांवों में अनाज या फलों को पहले मां को अर्पित किया जाता है तत्पश्चात उसका उपयोग किया जाता है।

घने बांज, बुरांश के जंगलों के मध्य स्थित माँ के इस मंदिर में वर्ष भर श्रद्धालुओं की आवाजाही रहती है लेकिन नवरात्रियों में माँ के भक्तों का हुजूम लगा रहता है। नवमी के दिन यहाँ पर लोग कन्यापूजन करते हैं। निःसंतान हो या असाध्य रोगी सभी माँ के प्रति श्रद्धा एवं विश्वास से मन्नतें मांगते है। मुख्य मंदिर के पास में ही माँ कालिका और हनुमान जी का मंदिर है। ललुवापानी से मंदिर तक सड़क बन जाने से श्रद्धालुओं का आवागमन सुगम हो गया है।

gj'oj crky

कुमाऊँ के न्यायकारी देवताओं में हरेश्वर बेताल का नाम काफी प्रचलित है कहा जाता है कि इनके चिन्तन मात्र से ही न्याय प्राप्त हो जाता है। चम्पावत विकास खंड में रौकुंवर नामक स्थान से 2 किमी0 नीचे लोहावती के किनारे यह न्यायकारी देव स्थल है। चम्पावत मुख्यालय से तामली मार्ग में मौनपोखरी से 5 किमी में नीचे स्थित यह स्थल हरेश्वर महादेव नाम से प्रख्यात है। साधु मोहन तीर्थ महाराज द्वारा संस्कृति सुमन में लिखा गया है कि वर्ष 2004 में एक मोहन तीर्थ नाम के अवधूत पूर्णागिरी गोरखनाथ मार्ग से होते हुए यहां पहुंचे। उनके अनुसार यह गुफा झाड़ियों से छिपी हुई थी। उन्होंने आस–पास के गांवों

के लोगों को बुलाकर गुफा के प्रांगण को स्वच्छ करवाया तथा वहां डेढ़ वर्ष तक साधना की और उक्त स्थल का प्रचार प्रसार किया, श्री श्री मोहन तीर्थ के अनुसार उत्तराखंड का सबसे सुंदर स्वयंभू शिवलिंग हरेश्वर महादेव में है। उक्त शिवलिंग एक परम मनोहर गुफा के अन्दर स्थित है। गुफा के चारों ओर से सुन्दर पर्वत शृंखलायें हैं। यह स्थल व्यक्ति के मनः स्थल पर एक विशेष प्रकार की आध्यात्मिक तरंग उत्पन्न करता है। इस स्थान पर साधना करते हुए व्यक्ति को एकाग्र होने में किसी प्रयत्न की आवश्यकता नहीं होती।

हरेश्वर महादेव मंदिर जनपद के लोगों का अपार आस्था का केन्द्र है चम्पावत विकासखण्ड में स्थित इस देवालय के लिए लोहाघाट से भी मार्ग है लोहाघाट रौशाल मोटर मार्ग में लोहाघाट से लगभग 15 किमी० पर स्थित दिगालीचौड़ कस्बे से लगभग 5 किमी० ढलान पर उतरकर इस स्थल तक पहुंचा जा सकता है। कहावत है कि भगवान शंकर जब सती के शरीर को लेकर भ्रमण कर रहे थे और भगवान विष्णु सती के अंग काट–काटकर गिराते जा रहे थे तब अचेतन शंकर जी को वर्तमान हरेश्वर में ही चेतना आई, शिव को परमशांति मुद्रा में ध्यानस्थ देखकर श्री हरि ने उनका पूजन किया। मान्यता है कि सर्वप्रथम यहां पर श्री हरि ने पूजन किया इसीलिए परमेश्वर का नाम हरेश्वर (हरिईश्वर) पड़ा। शिव के गण बेताल का मंदिर न्यायकारी देव के रूप में पूजा जाता है। पीड़ित व्यक्ति के प्रति बेताल की कृपा होती है। न्याय के लिए प्रसिद्ध बेताल अपनी गद्दी पर न्याय करता है। सबके सम्मुख निपटारा होता है। बताया जाता है कि मंदिर में एक बहीखाता है जिसमें निपटारे दर्ज होते है। निर्णय का पूरा हिसाब इस बहिखाते में दर्ज होता है। रौंकुंवर, भण्डारबोरा, बिल्हैड़ी, दिगालीचौड़, बाकू, चौडला, पिल्खी आदि निकटवर्ती गांवों के लोग हरेश्वर महादेव के प्रति अपार श्रद्धा रखते हैं। दुर्गम रास्तों घने जंगलों के मध्य इस देवस्थल पर शिवरात्रि के दिन विशाल मेला लगता है जिससें बड़ी संख्या में जनपद के श्रद्धालु पहुंचते हैं। जंगल के कठिन रास्तों से होकर बड़े कष्टों से इस देवस्थल तक पहुंचा जाता है। किन्तु श्रद्धालु यहां पर शिर्वाचन आदि अनुष्ठान बड़ी सहजता से भव्य रूप से कराते हैं। आज के समय में जब असुरक्षा की भावना स्वाभाविक सी हो गई है। किन्तु हरेश्वर महादेव के आस–पास के गांवों में लोग घरों में ताले नहीं लगाते, कहते हैं कि यहां कोई चोरी नहीं होती, कोई आपदा नहीं आती, हरेश्वर महादेव पर उन्हें अटूट विश्वास है। न्याय

देवता अटूट श्रद्धा के इस स्थल तक रास्तों का निर्माण एवं समुचित विकास के लिए श्रद्धालु आशान्वित है।

pEikor d ihj ixcj

कहा जाता है कि जनपद चंपावत में इस्लाम धर्मावलंबी चंद राजाओं के समय से निवास करते आ रहे हैं। चंदों के आगमन के साथ ही यहां आने वाली जातियों में मनिहार भी थे। जो राजमहल की रानियों की श्रृंगार सामग्री चूंड़ी आदि बनाने का कार्य करते थे। इन्हें चंपावत से 8 किमी० दूर लोहाघाट की ओर मल्लक में बसाया गया। जिसे वर्तमान में खूना भी कहते हैं। खूना मल्लक गांव में स्थापित इबादतगाह का सैकड़ों वर्ष पुराना इतिहास है। इसे कुमाऊं की सबसे पुरानी मस्जिद बताया जाता है। यह काले रंग की स्लेटों से ढकी है। जो शिल्प कला का बेजोड़ नमूना है।

यहां निवास करने वाले मनिहारों के बारे में बताया जाता है कि चंद राजाओं की राजधानी अल्मोड़ा स्थानान्तरित होने से काफी पहले ये यहां बस चुके थे। राजधानी परिवर्तन होने के पश्चात् ये पड़ोसी कुमय्यों के साथ यहीं बसे रहे, चंदों के साथ अल्मोड़ा नहीं गये। कुमाऊँ में उन दिनों माल–भाबर जाकर व्यवसाय करने की परम्परा थी। मनिहार लोग भी जाड़ों (ह्यून) में माल प्रवास करते थे। टनकपुर में मनिहार गोठ इनका निवास स्थान है।

कालू सैय्यद बाबा की मजार लोहाघाट नगर के हथरंगिया नामक स्थान के निकट है। इस मजार के प्रति सभी धर्म एवं समुदाय की अपार श्रद्धा है। सभी धर्म और समुदाय के लोग अपनी मन की मुराद पूरी करने पीर बाबा की चौखट पर माथा टेकने के लिए आते हैं। मुराद पूरी होने पर बृहस्पतिवार के दिन मजार पर चादर चढ़ाने का विशेष महत्व है। कालू सैय्यद बाबा की मजार पर प्रसाद के रूप में गुड़–चना चढ़ाया जाता है। वर्तमान में कोली ढेक गांव में भी मस्जिद का निर्माण किया गया है। वनबसा और मनिहार गोठ में भी मस्जिदें हैं।

डॉ० राम सिंह के अनुसार 1857 ई० से पूर्व एक मुगल व्यापारी टनकपुर बनबसा के मध्य स्थित छीनी गोठ नामक स्थान पर आकर बस गया था। कुमाऊं के कतिपय आंदोलनकारियों को संदेह हुआ कि वह व्यापारी अंग्रेजों का जासूस है। अतः उन्होंने उसे मौत के घाट उतार दिया। सिर भूमि पर छोड़कर, उसका धड़ पेड़ पर लटका दिया। कालांतर में वह भूत बन गया तथा स्थानीय लोगो को कष्ट पहुंचाने

लगा। धुर्यालों ने उसको प्रसन्न करने के लिए बकरे की बलि दी। चौड़ाकोटी देव रूप में उसकी पूजा करते हैं। इस प्रकार मुगल पूजा भी उनके ग्राम देवताओं के रूप में होती है। खूना मल्लक की मजार हो या कालूसाई की मजार या कोलीढेक की मस्जिद सभी स्थानों पर मुस्लिम समुदाय द्वारा सर्वधर्म समभाव की भावना से अरदास अदा की जाती है। मंदिर मस्जिदों के प्रति अगाध श्रद्वाभाव यहां के लोगों में आपसी भाईचारे एवं सौहार्द को प्रदर्शित करते हैं।

U;k; nork xkjy ¼xkYT;½

चंपावत शहर से लगभग 500 मीटर की दूरी पर गोरल चौड़ मैदान के निकट कुमाऊँ के प्रसिद्ध देवता गोरल का मंदिर स्थित है। जिस तरह माँ नंदा पूरे राज्य में पूजित है उसी प्रकार गोरल देवता भी कुमाऊँ में गोरल एवं गढ़वाल में कंडोलिया देव के रूप में स्थापित हैं। कुमाऊँ में न्याय देवता के रूप में प्रसिद्ध चंपावत में अवतरित होने वाले गोरल देवता के संबंध में अनेक लोकगाथाएं प्रचलित हैं। काली कुमाऊं और पाली–पछाऊं की लोक मान्यताओं के अनुसार गोरल का जन्म स्थान चंपावती गढ़ी, पिथौरागढ़ की गाथाओं में हलराई कोट तथा पूर्वी अल्मोड़ा क्षेत्र की गाथाओं में बांसुली सेरा माना गया है।

गोरल देवता के अन्य नाम–गोलू, गोलज्यू, गोरिया, ग्वेल, गौर, भैरव आदि हैं। इसी प्रकार इनके पिता का नाम भी हलराई, हालराई, झालराई, झलीराई आदि बताया गया है। गोरल की माता कलिंगा (कालिका) नाम से प्रसिद्ध हैं।

लोक मान्यता है कि चंपावत के कत्यूरी राजा झलराई की सात रानियां थी। किन्तु उनकी कोई संतान नहीं थी। ज्योतिष ने उनकी जन्म कुंडली देखकर बताया कि यदि वह आठवां विवाह करें तो आठवी रानी से उनका देवतुल्य पुत्र जन्म लेगा।

उसी रात्रि को राजा ने स्वप्न में नीलकंठ पर्वत पर एक सुंदर कन्या को तपस्यालीन देखा। प्रातः राजसी वस्त्र धारणकर दल–बल सहित नीलकंठ पर्वत की ओर चल पड़े। अनेक पर्वतों को पार करते हुए वे उस स्थान पर पहुंचे जहां कालिंका तपस्यारत थी। राजा कालिंका को अपनी आठवीं रानी बनाकर चंपावत ले आए। वह जब अन्य सातों रानियों से मिलने गई तो ईर्ष्यावश रानियों ने उसका स्वागत नहीं किया।

कालांतर में कालिंका गर्भवती हो गई। इस समाचार से राजा का खुशी से ठिकाना न रहा। किन्तु दूसरी ओर सातों रानियां दुःखी थी। वे किसी न किसी तरह से आठवीं रानी के गर्भ को नष्ट होते देखना चाहती थी। वे जानती थी कि संतान उत्पन्न होने पर राजा आठवीं रानी को अधिक चाहने लगेंगे।

जब प्रसव का समय आया तो सातों रानी, राजा से कालिंका के प्रति झूठी सहानुभूति प्रदर्शित करती हुई बोली, हम छोटी रानी का प्रसव स्वयं ही करा लेंगी। देख–रेख के लिए और किसी की आवश्यकता नहीं है। राजा सातों रानियों की बातों से सहमत होकर निश्चिंत हो गए।

प्रसव का समय निकट आया तो अन्य रानियां कालिंका से बोली यह महाराज की पहली संतान है। कुछ समय तक नवजात शिशु का मुख देखना मां और शिशु दोनों के लिए अशुभ होगा। इसलिए प्रसव के समय उसकी आंखों पर पट्टी बांधना आवश्यक है। यह कहते हुए उन्होंने कालिंका की आंखों पर पट्टी बांध दी। साथ ही उसके हाथ–पैर भी बांध दिए।

रानी ने एक रूपवान बच्चे को जन्म दिया सातों रानियां उसको मारने के लिए तरह–तरह के उपाय सोचने लगी। उन्होंने बालक को गायों के बीच गोशाला में छुपाकर रख दिया। प्रसव का प्रमाण देने के लिए उन्होंने रानी के निकट सिल–बट्टा रख दिया। कालिंका की आंखो की पट्टी खोलकर उसे बताया कि उसने किसी शिशु को जन्म न देकर सिल–बट्टे को जन्म दिया है। रानी ने जब यह देखा तो उसके होश उड़ गए। राजा को भी जब यह खबर लगी कि आठवीं रानी ने सिल–बट्टे को जन्म दिया है तो वे बहुत दुःखी हुए।

सातों रानी छुपकर गौशाले में इस आशा से गई कि गायों के बीच रखा हुआ शिशु अब तक मर चुका होगा। किन्तु वह तो अलौकिक शिशु था। वह गायों के बीच सकुशल हाथ–पैर हिला रहा था। उन्होंने बालक को उठाकर बिच्छू घास की झाड़ी में फेंक दिया ताकि वह मर जाए, किन्तु सात दिन बाद भी बालक झाड़ी में पड़ा जीवित ही रहा। अब उन्होंने बालक को मारने का अंतिम उपाय सोचा। उसे एक लोहे के भारी संदूक में बंद कर काली नदी में बहा दिया। संदूक तैरता हुआ आठवें दिन गोरीघाट पर पहुंच गया। वहां एक मछुवारे ने संदूक को बाहर निकाला। संदूक खोलकर देखा तो उसमें एक सुंदर बालक रोता हुआ उसकी तरफ देख रहा था।

मछुवारे की कोई संतान नहीं थी। अतः वह बालक को पत्नी के पास लाकर बोला आज कैलाश नाथ ने हमारी प्रार्थना सुन ली है। मुझे गोरी नदी में बहते हुए एक बक्से में यह बच्चा मिला है। मछुवारे की पत्नी ने जैसे ही बालक को गले से लगाया, उसके स्तनों से दूध की धार फूट पड़ी। वे बच्चे का लालन पालन करने लगे। उन्होंने बालक का नाम गोलू रखा। गोलू के घर में आते ही मछुवारे का घर धन–धान्य से भर गया।

जब गोलू बड़ा हो गया तो एक दिन उसने स्वप्न में राजधानी धौली धूमाकोट में अपनी मां कालिंका और पिता झलराई को देखा। गोलू ने देखे स्वप्न के आधार पर मछुवारे को अपनी सौतेली माताओं की काली करतूतों से अवगत करा दिया।

एक दिन गोलू काठ का घोड़ा लेकर उस स्थान की ओर चल पड़ा जहां सातों रानियां स्नान करने आती थीं। रानियों के सम्मुख जाकर वह काठ के घोड़े को पानी पिलाने का उपक्रम करने लगा। उसको देखकर रानियां कहने लगी, अरे लड़के क्या काठ का घोड़ा पानी पी सकता है। गोलू ने तुरंत उत्तर दिया – यदि एक स्त्री सिल बट्टे को जन्म दे सकती है तो काठ का घोड़ा पानी क्यों नहीं पी सकता। उत्तर को सुनकर रानियां स्तब्ध रह गई। अपना भेद खुल जाने से वे भयभीत होने लगी। राजा तक यह खबर पहुंच चुकी थी। उन्होंने गोलू को बुलाकर सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त की। गोलू ने राजा को सब कुछ बता दिया कि किस प्रकार उसकी माँ कालिंका के साथ ही राजा को भी ठगा गया है।

राजा ने गोलू को अपना पुत्र स्वीकार करते हुए उन सातों रानियों को उबलते हुए तेल के कड़ाहे में डालने का आदेश दिया। सातों रानी कालिंका के पैरों पर गिरकर क्षमा याचना मांगने लगी। गोलू के कहने पर उनको प्राणदान दे दिया गया, किन्तु जीवन यापन की व्यवस्था के साथ ही उन्हें राज्य से निष्कासित कर दिया।

राजा झलराई ने अपने समस्त दरबारियों को बुलाकर धौली धूमाकोट की राजगद्दी गोलू को सौंपने की घोषणा कर दी। इससे चंपावत के लोग अत्यंत हर्षित हुए। ईमानदारी तथा जनसेवा के कारण कुछ ही काल में उनका देवतुल्य आदर होने लगा। राजा चयनित होने के पश्चात् उनका पहला कार्य गरीबों के प्रति न्याय तथा दया प्रदर्शन था। गोलू ने अपने दीवान कलुवा और हरूवा के साथ गांव–गांव का

भ्रमण किया तथा लोगों की फरियाद सुनकर उनको उचित न्याय दिलाया।

गोलू के शासनकाल में चंपावत में चारों और सुख और आंनद व्याप्त था। उन्होंने चितई पहुंचकर दरबार लगाया तथा सबकों आदेश दिया कि छोटे–बड़े सभी न्याय के लिए दरबार में आ सकते हैं। सबकों न्याय दिया जाएगा। पर्वतीय क्षेत्रों में गोलू, महान न्यायवादी राजा के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे। पश्चात् उन्होंने भाबर क्षेत्र की ओर जाने का विचार बनाया। मां कालिंका का आशीर्वाद प्राप्त कर वे घोड़े पर चढ़कर मैदानी क्षेत्र की ओर चल पड़े। हल्द्वानी, बरेली, पीलीभीत, काशीपुर तथा रामनगर का भ्रमण कर वे रूद्रपुर पहुंचे। वहां से किच्छा और खटीमा होते हुए टनपकपुर से चारेगलिया गए। इन सभी स्थानों में उन्होंने अन्याय पीड़ित लोगों को न्याय दिलाया।

गोलू इतने लोकप्रिय और न्यायवादी राजा थे कि शासन काल में ही उन्हे देव स्वरूप पूजा जाने लगा था। गोलू कुमाऊँ क्षेत्र के सर्वाधिक लोकप्रिय देवता हैं। चंपावत के गौरिलचौड़ में गौरल देवता का सबसे प्राचीन मंदिर है। इनका प्रसिद्ध मंदिर चितई, अल्मोड़ा में भी है। साथ ही घोड़ाखाल, डोटी और अन्य कई स्थानों पर इनके मंदिर विद्यमान हैं।

जिन व्यक्तियों को किन्हीं कारणों से कोर्ट–कचहरी से न्याय सुलभ नहीं होता। वे अपनी अर्जियां गोलू देवता के दरबार में पहुंचाते हैं। ऐसी ही सैंकड़ों अर्जियां तथा स्टाम्प पेपर चितई में गोलू देवता के मंदिर में लगी हुई दिखाई देती हैं। जहां से उन्हें न्याय प्राप्त होता है।

संक्रांति तथा अन्य पर्वों पर उनकी पूजा विशेष रूप से की जाती है। उन्हें धूप, दीप और पुष्प भेंट किए जाते हैं। गोलू देवता को घंटियों तथा त्रिशूल भेंट करने से श्रद्धालुओं की मनोकामना पूर्ण होती हैं।

राग भाग काली कुमाऊँ में उल्लेख किया गया है कि गोरल चंपावत के बाजरीकोट के भंडारियों के साथ डोटी से आया था। गोरल के चंपावत पहुंचने पर उसकी आत्मा ने राजा के शरीर में प्रवेश कर लिया था। आत्मा के प्रभाव से मुक्त होने के लिए नागनाथ देवता के आदेश पर राजा ने गोरल चौड़ में मंदिर बनाकर गोरल की विधिवत स्थापना की थी।

माना जाता है कि वर्षों पूर्व चंपावत से कुछ परिवार पौड़ी चले गये थे। वह अपने साथ कंडी (टोकरी) में गोलज्यू की मूर्ति ले गये और वहां

स्थापित कर दी। जहां गोलज्यू की स्थापना हुई उस स्थान को 'कंडोलिया' एवं गोलज्यू को 'कंडोलिया' देव के नाम से जाना जाने लगा। पिछले कई वर्षों तक इन्हें गोलज्यू के मूल स्थान की जानकारी नहीं थी। इसलिये ये चितई मंदिर अल्मोड़ा में पूजा करने आते थे। कुछ समय पहले इन्हें ज्ञात हुआ कि गोलज्यू का मूल स्थल चंपावत है तो गढ़वाल से 40 लोगों के साथ श्रद्वालु ज्योति यात्रा लेकर यहां पहुंचे उन्होंने गोलज्यू के मूल स्थान में विशेष पूजा अर्चना की एवं गोरल के जागर का आयोजन किया। गोरल के रूप में अवतरित देव डांगरों ने श्रद्वालुओं को सर्व मनोकामना पूर्ण होने का आर्शीवाद दिया।

कुमाऊँ–गढ़वाल के न्यायकारी देवता गोरल की महिमा से अभिभूत चम्पावत के श्रद्वालुओं द्वारा विगत वर्षो से गोल्ज्यू महोत्सव का आयोजन किया जा रहा है, गोरल मंदिर चम्पावत में विशेष पूजा अर्चना, जागर के साथ ही गोरलचौड़ मैदान में अनेकों प्रदर्शनियों, सांस्कृतिक कार्यक्रमों के साथ–साथ भव्य मेले के आयोजन में सैकड़ों श्रद्धालु न्याय देवता को नमन करते है। गोरल मंदिर के भव्य रूप से सुसंजित किये जाने के प्रति आशान्वित हैं।

,Mh QVdf'kyk efnj

लोहाघाट–देवीधूरा–हल्द्वानी सड़क मार्ग में लोहाघाट से 21 किलोमीटर की दूरी पर सड़क से लगभग 02 किलोमीटर की ऊँचाई पर फटकशिला मंदिर स्थित है। कुमाऊँ में ऐड़ी सर्वमान्य देवता हैं। ऐड़ी मंदिर फटकशिला के बारे में लोकमान्यता है कि मुगलकाल में आतताइयों से सुरक्षा के लिए ऐड़ीमल राजा ने अपनी सेना को लेकर चंपावत के ब्यानधुरा नामक स्थान पर ऐड़ा लगा दिया था। जिससे शत्रु इस स्थान से आगे नहीं बढ़ सके। उन्होंने भगवान शिव का कठोर तप किया। भगवान शिव हरे रंग के शिवलिंग के रूप में प्रकट हुए।

जहां–जहां भगवान ने फटक (लाफ) मारी, वहीं फटक शिलाएं स्थापित हुई। भगवान ब्यानधुरा की पांचवीं फटक गहतोड़ा में पडी। फटक मारकर आने के कारण लोकभाषा में इसे फटकशिला कहा जाने लगा। इस शिवलिंग का तीन चौथाई भाग अभी तक ब्यानधुरा के उस मंदिर में ही विद्यमान है। जहां यह स्वतः रूप से प्रकट हुआ था। गहतोड़ा में इसी प्रकार के लिंग पर गाय द्वारा स्वयं दूध अर्पित किए जाने के कारण इसे दूधाधारी कहा जाने लगा।

कहा जाता है कि भानुदेव, गहतोड़ी नामक भक्त ने लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व मंदिर की स्थापना कर भगवान फटक शिला को समर्पित किया था। मंदिर के निकट ही एक नौला है जिसका जल प्रवाह उत्तर की ओर है। इस स्थान पर यात्रियों के विश्राम के लिए धर्मशाला विद्यमान है। ऐड़ी देवता को सफेद ध्वजा लोहे का धनुष और बाण अर्पित किए जाते हैं। सच्चे मन से फटकशिला का पूजन करने पर भक्तों की मनोकामना अवश्य पूर्ण होती है।

फटकशिला गहतोड़ा में वर्ष में चार बार वासंतिक नवरात्र, वैशाखी पूर्णिमा, शरदकालीन नवरात्र तथा अश्विन मास की विजयादशमी को विशेष पूजाएं होती हैं। इन अवसरों पर चारों दिशाओं से ढोल–नगाड़ों के साथ ध्वजा लेकर देवताओं के डांगर देवता के अवतारों के साथ आते हैं। लोग इस पुण्य धाम में जयकारा लगाते हुए पहुंचते हैं। इस अवसर पर उत्तर से गहतोड़ा, दक्षिण से ऐलमेल, पूरब से कमलेख तथा पश्चिम से पाटी गांव के देवताओं की बारातें सज–धजकर आती हैं। देवताओं की बारातें मंदिर में पहुंचने के पश्चात उनकी सामूहिक गद्दी लगाई जाती है। जिसमें अक्षतों के दानों से विध्न–बाधाओं को उजागर किया जाता है तथा उनका समाधान किया जाता है।

ऐड़ी फटकशिला का यह मंदिर पचास से अधिक गांवों का श्रद्धा का केन्द्र है। यहां पर मेले आयोजन के अवसर पर छोटी मोटी वस्तुओं का क्रय–विक्रय का हाट लगता है। जिसमें हल्दू गांव के अमरूद, बरमतोड़ा के अखरोट तथा लधौन और रौत्यूड़ा के कारीगरों द्वारा बनाए गए लोहे के बर्तन विशेष रूप से बिकते हैं।

पूजा गहतोड़ा के चूंरी (केंद्र) से प्रारंभ होती है। निःसंतान महिलायें मंदिर में दीपक प्रज्वलित कर तब तक मंदिर में बैठी रहती हैं जब तक की झपकी लगने पर स्वप्न में उन्हें वरदान नहीं मिल जाता।

भगवान फटकशिला का विशाल जागरण 12 वर्षों के अन्तराल में आयोजित होता है। गांव के एक निर्धारित स्थान पर 18 से 22 दिन तक जागर गाथाएं गाई जाती हैं। इन दिनों भोजन तथा धूनी–पानी की व्यवस्था गांववार तथा दिनवार पूर्वजों के समय के किये गये निर्धारण के अनुसार किया जाता है।

l;! efnj [ksrh[kku

लोहाघाट शहर से लोहाघाट–देवीधुरा–हल्द्वानी सड़क मार्ग पर 14 किलोमीटर की दूरी पर खेतीखान कस्बा स्थित है। अंग्रेजी शासनकाल में शिक्षा के लिए दीर्घकाल तक यहां के ऐंग्लो वर्नाक्यूलर मिडिल स्कूल का महत्वपूर्ण स्थान रहा।

कत्यूरीकाल में खेतीखान के मध्य में निर्मित सूर्य मंदिर के कारण भी इस स्थल की एक विशेष पहचान रही है। इस मंदिर का निर्माणकाल लगभग 11वीं शताब्दी से पूर्व का बताया जाता है। जो धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टि से ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक आस्था के केंद्र के रूप में भी अपना महत्व रखता है। यह मंदिर वास्तुकला का बेजोड़ नमूना है। मंदिर की चौड़ाई 4.5 मीटर तथा लम्बाई 7 मीटर है। भीतर फर्श में सुदृढ़ शिलाएं लगी हैं। मंदिर के शीर्ष पर बड़े गोल टोकरे के आकार का गुम्बद बना हैं। मंदिर में बाई ओर बिरखम स्थापित है। जो किसी वीर के सम्मान में लगा हो सकता है।

चंद शासन काल से पूर्व रूहेले यहां लूटपाट तथा मंदिर को नष्ट करने के उद्देश्य से आये थे। किन्तु यहां के वीरों ने मंदिर को आंच नहीं आने दी। वर्तमान में मंदिर तक जाने वाली सीढ़ियां तथा परिसर की दीवार टूटी हुई दशा में हैं।

खेतीखान मंदिर के प्रांगण में विगत कुछ वर्षों से दीपावली के अवसर पर चार दिवसीय दीपोत्सव का आयोजन किया जाता है। उन दिनों यहां भव्य मेले का आयोजन किया जाता है। विविध प्रकार के सांस्कृतिक कार्यक्रमों की धूम रहती है। धार्मिक क्रिया–कलाप, पूजा अर्चना के साथ ही हर्षोल्लास और खुशी का वातावरण बना रहता है।

खेतीखान क्षेत्र जनपद में आलू की खेती एवं सेब–नाशपाती आदि मौसमी फलों के उत्पादन का प्रमुख क्षेत्र है। यहां उत्पादित फसलों का उचित संरक्षण किया जाय तो किसानों को आर्थिक लाभ होगा और उन्नत कृषि उपज विकसित होने की सम्भावनाएं बढ़ेंगी।

ekus'oj efnj

लोहाघाट–चंपावत के मध्य राष्ट्रीय राजमार्ग में मानेश्वर से लगभग 01 किलोमीटर की ऊँचाई पर स्थापित शिवधाम अगाध–आस्था का केन्द्र है। चंपावत के समानान्तर इस चोटी को श्यामराज चोटी भी कहा जाता है।

मानसखंड में इसे मानसरोवर हर अथवा मानेश्वर नाम से संबोधित किया गया है। इस स्थल का वर्णन करते हुए कहा गया है कि प्राचीन काल में यह मानसरोवर यात्रा का शास्त्र सम्मत मार्ग था। प्राचीनकाल में तीर्थ यात्री इसी मार्ग से यात्रा करते हुए मानेश्वर तथा लोहाघाट के ऋषेश्वर पवित्र कुंड में आते जाते हुए स्नान करते थे।

लोकमान्यता के अनुसार एक बार गांव की गायें चुगने के लिए इस स्थल पर एक शिला के समीप आयी। जिस पर गायों ने स्वतः ही दूध गिरा दिया। गांव वालों ने अपनी गायों का दूध कम होते देख, उन्हें अन्य दिशा में चुगने के लिए भेज दिया। इसके बाद देखा गया कि अनेक गायें बीमार पड़ गई। कइयों की मौत हो गई। जब गांव वालों को इसका कारण मालूम हुआ तो उन्होंने उस पाषाण शिला के निकट जाकर क्षमा–याचना की। गायें चुगने के लिए पुनः उसी दिशा में भेजी जाने लगी। पश्चात् सभी गायें स्वस्थ होकर अधिक दूध देने लगी। मानेश्वर क्षेत्र में खुशियों छा गई। तभी से मानेश्वर की इस चमत्कारिक शिला क्षेत्र में मेले का आयोजन होने लगा। दूरस्थ क्षेत्रों के लोग पशुओं की कुशलता तथा उनकी वृद्धि की कामना के लिए इस शिला मेला में पहुंचने लगे। मानेश्वर स्थित यह शिला लगभग बाइस फीट धनुषाकार रूप में है। जिससे निरन्तर जल की बूंदे टपकती रहती हैं।

एक अन्य लोकमान्यतानुसार लाक्षागृह घटना के पश्चात पांडव माता कुंती सहित मानेश्वर की इसी पहाड़ी पर आ गए थे। युधिष्ठिर ने अपने पिता के श्राद्ध–तर्पण के लिए जल प्राप्त करने हेतु इस स्थान पर तीर चलाया तो जल धारा फूट पड़ी। इस स्थान को ही मानेश्वर नौली कहा जाता है। यहां स्थित बावड़ी सदैव जल से भरी रहती है। जिसका जल अलौकिक है।

सन् 1208 में चंपावत के राजा निर्भय चंद ने इस स्थान पर मंदिर का निर्माण करवाया। सदियों से आस्था और श्रद्धा का यह स्थल चमत्कारिक मान्यताओं के लिए भी प्रसिद्ध रहा है। यहां पर स्थित नौले (बावड़ी) का जल पवित्र माना जाता है। जिस स्थान से जल धारा निकली है उसे गुप्त नौली के नाम से जाना जाता है। इस जल के स्नान से शारीरिक रोग विकार दूर होते हैं एवं शिवलिंग की पूजा से मनोवांछित फल प्राप्त होते हैं।

घने पेड़ों, झुरमुटों के मध्य शान्त वादियों में स्थित इस पवित्र धाम में जहां एक ओर अलौकिक शान्ति की अनुभूमि होती है वहीं इस स्थल

से लोहाघाट, किमतोली, झुमाधुरी, चम्पावत आदि स्थलों के मनोहारी दृश्य दृष्टिगत होते हैं। सड़क से मंदिर तक पक्का मार्ग निर्मित है। मंदिर परिसर में फलदार वृक्षों का संरक्षण करते हुए बागवानी व परिसर की देखभाल यहां पर कुछ सन्तजन करते हैं। आस्था के इस केन्द्र में वर्ष भर श्रद्वालुओं की आवाजाही रहती है। महाशिवरात्रि, नवरात्रि, सोमवती अमावश्या और एकादशी आदि पर्वों के अवसर पर श्रद्धालु बड़ी संख्या में यहां दर्शनार्थ आते हैं। इस अमूल्य धरोहर के संरक्षण के लिए यहां पर ठहरने वाले सन्तों, भक्तजनों का प्रयास सराहनीय है।

nohèkke vf[ky rkfj.kh

लोहाघाट शहर से लोहाघाट–रौसाल मोटर मार्ग पर 15 किलोमीटर की दूरी पर झड़पतिया से 01 किलोमीटर की ऊँचाई पर देवदार के घने वनों के मध्य अखिलतारिणी देवी धाम का मंदिर है। लोकगाथाओं में उल्लेख किया गया है कि कुंभकरण ने भगवान शिव से वरदान मांगा था कि मृत्यु होने पर उसका सिर लंका में न गिरे। उसने दूसरा वर यह भी मांगा था कि कुंडलों सहित उसका मुकुट गिरने का स्थान जलमग्न हो जाए। चिरकाल पश्चात राम–रावण युद्ध में भगवान राम ने कुंभकरण का शिरोभेदन किया। भगवान शंकर के वरदान को स्मरण कर भगवान राम ने हनुमान से कहा–हे! महावीर हनुमान इस राक्षस ने अपना सिर लंका में न गिरने का वरदान मांगा था। उसने यह वरदान भी मांगा था कि उसका मुकुट गिरने का स्थान जलमग्न हो जाएगा। अतः इसका सिर लंका में नही गिरेगा। इसलिए तुम इसका सिर बांये हाथ से पकड़कर उत्तर की ओर कुर्मांचल पर्वत में फेंक दो। वहां दानवों का राज्य है। जहां इसका सिर गिरेगा वहां जलमग्न होने से सभी राक्षस उसमें डूब जाएंगे। हनुमान ने ऐसा ही किया। कुंभकरण का सिर गिरते ही उस क्षेत्र के सभी राक्षस जल में डूब गए।

महाभारत युद्ध के पश्चात भीम ने एक रात स्वप्न में अपने पुत्र घटोत्कच को देखा, स्वप्न में उसने भीम से कहा– हे तात मैंने भूमंडल में अभी तक कोई स्थान प्राप्त नहीं किया है। मुझे कोई जल युक्त स्थान उपलब्ध कराएं। तब युधिष्ठिर सहित पांडवों ने वह स्थान खोजना शुरू किया जहां कुंभकरण का सिर गिरा हुआ था। कुर्मांचल पहुंचकर पांडवों ने वहां की नदियों में स्नान किया। अपने पुत्र घटोत्कच को स्थान दिलाने के लिए भीम ने अखिलतारिणी व भीमादेवी की स्तुति की। भीम द्वारा

स्तुति करने पर देवी पृथ्वी का भेदन कर प्रकट हुई। लोक मान्यता है कि उसी स्थान पर अखिलतारिणी देवी का धाम स्थापित हुआ। इस स्थान पर भव्य–प्राचीन मंदिर व धर्मशाला निर्मित है।

प्रो० डी०डी० शर्मा के मतानुसार अखिलतारिणी देवी के उत्सव में श्रावणी पूर्णिमा के अवसर पर मंदिर में कुमारी कन्याओं को देवदासियों के रूप में अर्पित किए जाने की परम्परा थी। जो विगत शताब्दी के पूर्वाद्ध में समाप्त हो गई थी। दिगालीचौड़ क्षेत्र के लोगों के साथ ही जनपद के श्रद्वालुओं में देवीधाम के प्रति अगाध आस्था है। वैसे तो वर्ष भर भक्तों का मंदिर में आवागमन होता रहता है। किन्तु नवरात्रियों में जनपद के दूरस्थ क्षेत्रों से भी दर्शनार्थी यहां आकर मां से मन्नतें करते हैं और माँ के आशीर्वाद से मन्नतें पूरी होने के प्रति आश्वस्त रहते हैं।

?kVkRdp efnj

भीम पुत्र घटोत्कच का यह मंदिर चम्पावत–तामली मोटर मार्ग में चम्पावत नगर से 2 किलोमीटर की दूरी पर घने देवदार वनों के मध्य गिड़िया नदी के पार फूंगर व बोरा गांव के समीप स्थित है। यह प्रसिद्ध मंदिर पांडव कालीन भीम के पुत्र घटोत्कच का है। जिसे स्थानीय बोली में 'घटकू' कहते हैं। घटोत्कच को बोरा अपना ईष्ट देव मानते हैं, अपने इष्ट देव को खुश करने के लिए यहां युगों से दशैं प्रथा चली आ रही है। जिसमें विजयादशमी के दिन बकरो और कटरे की बलि दी जाने की प्रथा रही है।

यहां की बोरा जाति के संबंध में कहा जाता है कि घटोत्कच के पुत्र का नाम बरी था, उनके वंशज बोरा कहलाए। पूर्व में ये 'बर' कहलाते थे। 'बरी' के विषय में महाभारत में वर्णन किया गया है कि महाभारत युद्ध में कर्ण के हाथों घटोत्कच के मारे जाने पर 'बरी' युद्ध के लिए तैयार हुआ। उसने कृष्ण से कहा कि यदि सेना का नेतृत्व उसे दे दिया जाए तो वह तीन दिन में विजय दिला सकता है। किन्तु किन्हीं कारण से कृष्ण ने युद्ध से पहले ही अपने सुदर्शन चक्र से बरी का सिर धड़ से पृथक कर उसे मात्र युद्ध का दृश्य देखने की अनुमति दी थी।

कहा जाता है कि धड़ अलग हो जाने के बाद भी 'बरी' महाभारत का युद्ध देखता रहा। वीरता की इसी कहानी के आधार पर उसके वंशज मंदिरों में बलि अर्पित करते हैं। घटोत्कच मंदिर की जनमानस के मन

में एक विशिष्ट छाप है। यहां पर एक सुरंग है जिसे 'घटकू की बीड़ी' कहा जाता है। इसके संबध में एक लोक मान्यता है कि बीड़ी में जल अतिवृष्टि होने पर धर्मशिला स्थान से जल लाकर इस बीड़ी में जल डाला जाता है। मिट्टी के पांच घड़े पानी डालने पर यदि बीड़ी भर जाए तो अनुमान लगाया जाता है कि वर्षा शीघ्र ही होगी। यदि निकट भविष्य में वर्षा के आसार न हो तो सैकड़ों घड़े पानी डालने पर भी बीड़ी नहीं भरती। दैवी आपदाओं से राहत के लिए स्थानीय लोग आज भी घटकू महादेव में जलाभिषेक करते हैं। स्थानीय लोग इसे मौसम विज्ञान का देवता मानते हैं।

घटकू की बीड़ी के संबध में एक अन्य किंवदंती भी प्रचलित है कि इसमें दूध डालने पर वह 2 किलोमीटर नीचे स्थित हिडिम्बा के मंदिर में पहुंच जाता है। घटकू मंदिर के नीचे की तरफ उत्तरवाहिनी गंडकी नदी का उद्‌गम होता है। कहा जाता है कि घटोत्कच का सिर इस स्थान पर पड़ा था। जब अर्जुन को यह ज्ञात हुआ तो उन्होंने तीर से नदी के तटबंधों को तोड़ डाला। जिससे वह उत्तर दिशा की ओर बहने लगी। जिस स्थान पर घटोत्कच का श्राद्ध किया गया था। वह शिला 'धर्मशिला' के नाम से जानी जाती है। धार्मिक पर्वों पर यहां पर आज भी स्नान करके लोग पुण्य लाभ प्राप्त करते हैं।

घटकू के मंदिर में एक प्रतिमा घुटनों तक लम्बा चोगा पहने पीछे की ओर झूलती हुई विद्यमान है। जिसके दोनों हाथ टूटे हुए हैं। यहां पर एक विष्णु प्रतिमा तथा शिव–पार्वती की मूर्ति है। लोकमतानुसार घटकू का मंदिर पूरे भारत में केवल चम्पावत में ही है। लेकिन इससे जुड़े प्रंसगों पर चर्चा करने पर बाराकोट–लड़ीधुरा मंदिर के पुजारी संजय जोशी जी बताते हैं कि लटोली के जोशी चन्द राजाओं के पुराहित थे। चन्द राजाओं की राजधानी अल्मोड़ा स्थानान्तरित हुई तो कुछ लोग अल्मोड़ा चले गये। कुछ लटोली में रहने लगे। उसी समय दो भाई चन्द्र बल्लभ जोशी और शक्तिबल्लभ जोशी बाराकोट में बस गये। जिन्हें बाराकोटी ब्राह्मण कहते थे। दोनों भाई अपने साथ घटकू की प्रतिमूर्ति के रूप में एक वर्तन (तौली) एवं एक देवदार का पेड़ अपने साथ ले गये। उन्होंने बाराकोट में घटकू का मंदिर स्थापित किया। आज बाराकोट में घटकू ईष्ट देव के रूप में पूज्य है। सूखा पड़ने पर यहां पर भी चम्पावत घटकू मंदिर की तरह बीड़ी में जल भरने की परम्परा है। मंदिर के आस

पास देवदार के वृक्ष है। जबकि बाराकोट के आस पास के क्षेत्र में देवदार के वृक्ष कहीं नहीं है।

C;kuèkjk ,Mh

टनकपुर से लगभग 30 किलोमीटर की दूरी पर घने निर्जन वनों के मध्य कुमाऊँ के सर्वमान्य देवता ऐड़ी का मंदिर है। टनकपुर से ब्यानधुरा जाने के लिए टनकपुर–पिथौरागढ़ सड़क मार्ग में टनकपुर से 01 किमी० आगे ककराली गेट से वन विभाग की सड़क बनी है। जिससे वन निगम के ट्रकों से आवागमन होता है। साल, शीशम, खैर के घने वनों से आच्छादित इस मार्ग पर जंगली जानवरों का भय व्याप्त रहता है। इसलिये यहां समूहों में दर्शन के लिए जाते हैं।

दूसरी ओर सूखीढांक से नैनीताल तक फैली वाह्य हिमालय की शिवालिक पर्वत श्रृंखला के दक्षिणी अंतिम छोर से शिखर पर जिसकी जड़ से भाबर के मैदानी भाग प्रारम्भ होते हैं, ब्यानधुरा स्थित हैं। सूखीढांक से अमगिड़ी होकर ब्यान धूरा की दूरी लगभग 20 किलोमीटर है। सूखीढांक से नैनीताल तक फैली शिवालिक श्रेणी के तलहटी से भाबर का मैदानी क्षेत्र आरम्भ होता है। इसी स्थान पर ब्यानधुरा स्थित है। ऐड़ी ही एकमात्र ऐसा देवता है जो प्रत्येक घर में पूजा जाता है। ऐड़ी के विषय में लोगों की धारणा है कि वह धनुर्धारी देव है। जो आखेट के लिए ऊंचे शिखरों पर विचरण करता है। उसकी आंखें खोपड़ी में ऊपर की ओर मानी जाती है।

सूखीढ़ांक निवासी शंकर दत्त जोशी जी बताते है कि ब्यानधुरा में ऐड़ी के मंदिर से ऊपर की ओर पहाड़ी पर पूर्णागिरी देवी का एक छोटा मंदिर है। पूर्णागिरी, ऐड़ी की इष्ट देवी है। देवी की ऐड़ी पर विषेश कृपा के कारण लोगों का मानना है कि ब्यानधुरा ऐड़ी के बीरान स्थान पर स्थित होने के बावजूद आज तक सिंह या बाघ ने किसी को हानि नहीं पहुंचाई।

ब्यानधुरा के ऐड़ी देवता को लोग तुरंत इच्छित फल देने वाला देवता मानते हैं। श्रद्धालु यहां पर अनेक प्रकार की मनौतियों को लेकर आते हैं। निःसंतान को संतान, असाध्य रोगी के रोग को जड़ से मिटा देना, अन्याय से पीड़ित को तत्काल न्याय दिलाना, गाय, भैंसों में दूध बढ़ाना जैसी अनेक मनौतियों को लेकर श्रद्धालु ब्यानधुरा पहुंचते हैं। ऐड़ी के पुजारी तलियाबांज के जोशी ब्राह्मण हैं।

ग्रीष्म व वर्षा ऋतु में यहां पहुंचना अति कठिन है। आश्विन माह की नवरात्रियों से लेकर जाड़ों तक यहां भक्तों का तांता लगा रहता है। नवरात्रियों में जागरण होता है। जागरों में ऐड़ी को 'महाराजा' कहा जाता है। वे अपने डंगरिए पर अवतरित होकर भक्तों की मनोकामना पूर्ण होने का वरदान देते हैं। ऐड़ी का विधिवत दरबार लगता है। महाराजा ऐड़ी के बैठने के लिए एक चौरस शिला की चौकी बनी होती है। उस पर उनका सिंहासन सजाया जाता है।

ऐड़ी जब किसी के शरीर में अवतार लेता है तो उसके पश्चात उस स्थल पर दूसरा देवता अवतार नहीं ले सकता। कार्तिकी पूर्णिमा को जिसे स्थानीय लोग ''गढ़ कार्तिकी'' कहते हैं। इस दिन श्रद्धालुओं की सर्वाधिक संख्या होती है। यह पर्व मुख्यतः महिलाओं के लिए अधिक महत्वपूर्ण होता है। इस दिन अनेक महिलाएं अपने हाथों में दीपक लेकर ऐड़ी के आसन की चौकी के पास एकाग्र होकर अपनी मनोकामना लेकर बैठ जाती हैं। ऐड़ी के छड़ीदार बुड़म्याल सिंहासन के समीप खड़े रहते हैं। मंदिर के सेवादार आस–पास के आठ गांवों के लोग हैं। जो अपनी बारी से मंदिर में चावत, दाल, आटा, घी, तेल, नमक, इत्यादि की व्यवस्था करते हैं। जिससे मंदिर में ठहरने वालों को भोजन कराया जाता है। ऐड़ी की पूजा में बकरा बलिदान की परंपरा रही है। नई ब्याई गाय, भैंस का दूध, दही एवं प्रथम बार बना घी ऐड़ी को अवश्य अर्पित किया जाता है।

मनोकामना पूर्ण होने पर लोग अपनी सामर्थ्य के अनुसार ऐड़ी को धनुष–बाण भेंट करते हैं। ब्यानधुरा में इस प्रकार के धनुष–बाणों का ढेर लगा है। लोक विश्वास है कि रात में धनुष पर लगे बाण बरेली तक जाकर गिरते है। ऐड़ी का मंदिर बिना छत का होता है। जो 2–3 फीट की ऊंचाई पर दीवारों का एक साधारण बाड़ा मात्र होता है। उसमें धनुष, बाण, गदा, त्रिशूल आदि रखे जाते हैं।

कतिपय लोग यह भी कहते हैं कि ऐरी जाति का एक व्यक्ति बड़ा बलशाली था। उसको शिकार करने का शौक था। जब वह मरा तो भूत बन गया। उसको प्रसन्न करने के लिए हलुवा, पूरी, बकरा आदि चढ़ाते हैं।

ब्यानधूरा ऐड़ी का कुमाऊँ के लोक देवों में विशेष स्थान है। घर–घर उसके दैविक रूप में चमत्कारों का बखान होता है। उसके फाग घर–घर में गाये जाते हैं। नवरात्रों में विशेष पूजा अर्चना के साथ ही कहीं–कहीं

पर 22 दिनों तक जागर भी लगाये जाते हैं जिसमें ऐड़ी अवतरित होकर सर्वमनोकामना पूर्ण होने का आशीर्वाद देते हैं।

pe efUnj penoy

लोहाघाट नगर से 21 किलोमीटर की दूरी पर जनपद चम्पावत का प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थल ''गुमदेश'' चमदेवल कस्बा है। इसी कस्बें में प्रसिद्ध चमू देवता का ऐतिहासिक मन्दिर स्थित है। जनपद चम्पावत के प्रमुख उत्सवों में से एक ''चैतोला मेला'' इसी मन्दिर के प्रांगण में मनाया जाता है।

यह धार्मिक मेला प्रतिवर्ष चैत्राष्टमी से लेकर दशमी तक तीन दिन पर्यन्त चलता हैं। इसका भव्य आयोजन चौमू देवता के मन्दिर में होता है। प्रथम दिवस, चौमू की डोली को मढ़ गांव ले जाते हैं। दूसरे दिन देवता की सम्पूर्ण क्षेत्र में यात्रा कराकर उसे वापस मन्दिर में ही स्थापित कर दिया जाता है। तीसरे दिन मेला स्थल पर झोड़ा, लोकनृत्य, संगीत आदि का आयोजन होता है।

इस पर्व पर चावल के पापड़ों का विशेष महत्व है। इन पापड़ों को महिलाएं तैयार करती हैं। पापड़ों को बेलना तथा तलने आदि का कार्य पुरूषों की दृष्टि से छिपाकर परदे में किया जाता है। अष्टमी की तिथि को रिश्तेदार तथा आमंत्रित लोग अपने परिचितों के घर में पहुंच जाते हैं। राम नवमी का दिन विशेष पवित्र माना जाता है। उस दिन अत्यंत सात्विक भोजन किया जाता है। कुलथ की दाल विशेष पवित्र मानी जाती है। प्रातः काल से ही प्रत्येक घर में भांति–भांति के पकवान बनाए जाते हैं। दोपहर से पूर्व सभी लोग शिंलिंग के प्रसिद्ध स्थान चमदेवल के प्रांगण में एकत्र होते हैं।

चैतोल मेला के संबंध में स्थानीय लोगों में एक किंवदंतीं प्रचलित है कि प्राचीनकाल में बकासुर नामक एक राक्षस ने इस क्षेत्र में आतंक फैला रखा था। वह प्रतिदिन एक व्यक्ति को अपना आहार बना लेता था। एक दिन मढ़ गांव की एक वृद्धा के पौत्र को राक्षस द्वारा आहार बनाया जा रहा था। वृद्धा व्याकुल होकर चौमू नामक एक बलशाली युवक के पास सहायता के लिए पहुंची। उसने कहा कि यदि चौमू उसके पौत्र की रक्षा कर देगा तो वह उसके सम्मान में ऐसा कार्य करेगी जो अभी तक किसी ने न किया होगा। वह ऐसा भोज देगी जो अभी तक किसी ने दिया होगा, वह भी ऐसे समय पर जब चारों ओर सूखा है।

लोगों के पास खाने को चावल का एक दाना तक नहीं। जंगल में एक भी पत्ता शेष नहीं।

चौमू नामक उस युवक ने वृद्धा की याचना स्वीकार कर ली। युवक अपने साथियों के साथ बकासुर राक्षस का संहार करने चल पड़ा। बकासुर से युद्ध हुआ। चौमू का एक मित्र लंगड़ा हो गया। दूसरे की जीभ कट गई। अंत में चौमू ने बकासुर राक्षस का संहार कर दिया और उसी स्थान पर भूमि के भीतर गाड़ दिया। जिस स्थान पर चौमू और बकासुर का युद्ध हुआ चमदेवल नामक उस स्थान पर चौमू का मंदिर स्थापित है। चौमू के दोनों सखा लाटा व भराड़ा वहां पर देव स्वरूप पूजित हैं।

वृद्धा ने अपने पौत्र की रक्षा के उपलक्ष्य में चौमू को देव स्वरूप डोली में बिठाकर सम्पूर्ण क्षेत्र में विजय यात्रा का आयोजन कराया। चौमू को अपार मान–सम्मान दिया और विशेष विधि से तैयार किये गये चावल के पापड़ का भोग लगाया। क्षेत्र के समस्त लोग इस त्यौहार में सम्मिलित हुए। आज भी इस भव्य मेले में देवता को प्रसाद के रूप में पापड़ चढ़ाया जाता है। तत्कालीन वह परम्परा आज भी उसी रूप में जीवित है। आज भी गुमदेश क्षेत्र के लोगों का यह सबसे प्रमुख पर्वोत्सव है।

चौमू देवता की डोली में मढ़गांव का वह व्यक्ति बैठता है जिस पर देवता अवतरित होता है। चौमू देवता का जयकारा करते हुए सैकड़ों लोग दल बनाकर आते हैं। चौमू देवता के दर्शनों के लिए मन्दिर में सुदूर क्षेत्र के हजारों श्रद्धालु एकत्र होते हैं।

विशाल जनसमूह में लोग नगाड़ों के गगनभेदी स्वरों के साथ परम्परागत परिधानों में चौमू देवता का जयकारा करते हुए मेला स्थल की ओर प्रस्थान करते हैं। इस अवसर पर महिलाओं को टोली देवगीत गाती हुई पीछे–पीछे चलती है।

मेले के प्रबंध तथा शांति व्यवस्था में मेला कमेटी की विशेष भूमिका रहती है। इस अवसर पर सांस्कृतिक कार्यक्रम, लोकगीत एवं नृत्यगीत आदि का आयोजन होता है। मेले में आगंतुक सभी लोगों को भोजन व्यवस्था मेला क्षेत्र के गांवों द्वारा की जाती है। इन दिनों आस–पास के गांवों में दिन–रात उत्सव का माहौल बना रहता है। सभी लोग पहाड़ के कठोर जीवन को भुलाकर परिजनों के साथ आनंद और खुशियां मनाते हैं। यह ऐसा अवसर होता है जब विवाहिता बेटियों को 'भिटौली' के रूप में अपने मायके के पकवान आदि दिये जाते हैं। भिटौली लेकर भाई अथवा पिता आते हैं।

चमू देवता के बारे में यह भी मान्यता है कि इसके चार मुंह होने के कारण इसे ''चौमू'' कहा जाता है। इसे चतुर्मुखी पशुपति (शिव) का प्रतीक भी माना जाता है। चौमू की तुलना वैदिक देवता ''पूशन'' से भी की जाती है। जिसे पथभ्रष्टों का मार्ग दर्शक माना जाता है।

चैतोला मेले के परम्परागत स्वरूप की भव्यता को जनसहयोग द्वारा बढ़ावा दिया जा रहा है मेले की विविध व्यवस्थाओं में क्षेत्र के युवा एवं बुजुर्ग पुरूष महिलायें श्रद्धा एवं सेवा भाव के साथ सहयोग करते हैं। चैतोला मेला जनपद के प्रमुख पर्वोत्सवों में से एक है। चैतोल मेला के भव्यता पूर्वक आयोजन के लिए मेला कमेटी के प्रयास सराहनीय हैं।

yMhèkjk efnj

जनपद के विकासखण्ड बाराकोट में लोहाघाट–बाराकोट मोटर मार्ग में बाराकोट से 2 किमी० पहले ऊंची चोटी पर स्थित माँ भगवती के मंदिर को 'लड़ीधूरा' के नाम से जाना जाता है। मंदिर के पुजारी संजय जोशी जी के अनुसार लटोली (चम्पावत) के जोशी चन्द राजाओं के राजपुरोहित थे चन्द राजाओं की राजधानी जब चम्पावत से अल्मोड़ा स्थानान्तरित हुई तो कुछ लोग लटोली रह गये, कुछ चन्द राजाओं के साथ अल्मोड़ा चले गये, उसी समय रूद्र बल्लभ जोशी एवं शक्ति बल्लभ जोशी बाराकोट में आकर बस गये। बाराकोट बाजार के समीप बस्तोली तोक में इनके आवासों के खंडहर अभी शेष है। उन दिनों बाराकोट के आस–पास के गांवों में हैजा महामारी फैली थी। दैवी आपदा से निपटने के लिए ग्रामीणों ने पंचायत की। पंचायत में निर्णय के बाद जोशी लोगों से पूर्णागिरी देवी की प्रतिमूर्ति लाने को कहा गया। दोनों भाई इलाके को महामारी से बचाने के लिए देवी की प्रतिपूर्ति लाने पूर्णागिरी मंदिर टनकपुर गये। 3 दिन पैदल चलकर दोनों भाई कलश में मूर्ति लेकर पंहुचे। बताया जाता है कि बाराकोट से 2 किमी० पहले (जहां पर अभी लड़ीधूरा मंदिर का प्रवेश द्वार है।) क्वांरकोली नामक स्थान पर दोनों भाई शौच के लिए गये तो कलश को वहां पर स्थित ऐड़ी मंदिर में रख गये, शौच से निवृत्त होने के पश्चात मंदिर में कलश न देखकर अचरज में पड़ गये। दोनों भाई बड़े निराश हो गये, ऐड़ी देवता के मन्दिर से कलश गायब हो गया। निराश होकर ऐड़ी देवता पर क्रोधित होकर उलाहना करने लगे और मायूस होकर घर आ गये। रात को सपने में देवी माँ के दर्शन हुए देवी ने कहा मैं अपने उचित स्थान

पर चली गई हूँ। मुझे यहां पर स्थापित करो यही मेरा स्थान होगा। देवी के द्वारा सपने में बताये गये स्थान पर लोग पहुंचे तो कलश देखकर उनकी खुशी का ठिकाना न रहा, दुर्गम पहाड़ी पर माँ की मूर्ति (कलश) की स्थापना की गई। पूर्णागिरी माँ को यहां भगवती मैय्या के नाम से स्थापित किया गया जो आज लड़ीधूरा नाम से प्रसिद्ध है। माना जाता है कि मां के मंदिर की स्थापना के बाद रोग–शोक दूर हुए और प्रजा में सुख–शांति का वातावरण बना। बाराकोट विकासखण्ड के लोगों में मां के प्रति अगाध श्रद्धा है। फौज की नौकरी करने वाले युवा जब मोर्चे पर जाते है तो भारत माता की जय के साथ भगवती मैय्या का जैकारा भी करते हैं। लोगों के जेहन में माँ के प्रति अगाध श्रद्धाभाव के कारण जब भी कोई कष्ट आता है तो स्वतः ही हे भगवती मैय्या! की पुकार हो जाती है। दुर्गम चोटी पर चीड़ के जंगलों के मध्य स्थित माँ का मंदिर अत्यंत रमणीक स्थल है। माँ की चरण स्थली में अपार शंति की अनुभूति होती है।

अश्विनी शुक्लपक्ष पूर्णिमा को यहां पर विशाल मेले का आयोजन किया जाता है। जिसमें क्षेत्र एवं जनपद के हजारों श्रद्धालु माँ के दर्शनार्थ आते हैं। पूर्णिमा की पहली रात्रि चतुर्दशी को काकड़ बाराकोट व पम्दा गांवों में रात्रि जागर, जागरण आयोजित होते हैं। पूर्णिमा के दिन काकड़ व बाराकोट गांव से मंदिर की ओर देवरथ आते हैं। देवरथों में भगवती के रूप में अवतरित देवडांगर सवार होते हैं रथों को चढ़ाई में मोटे रस्सों से खीचा जाता है। हजारों लोग माँ के जयकारे के साथ मंदिर की ओर बढ़ते हैं। अपने–अपने रथ को मंदिर तक पहले पहुंचाने के लिए काकड़ व बाराकोट गांवों की प्रतिस्पर्धा रहती है। जिससे श्रद्धालुओं का जोश और अधिक हो जाता है। हजारों की भीड़ में चढ़ाई चढ़ते हुए माँ के जयकारों के साथ श्रद्धालु रथों के साथ–साथ मंदिर पहुंचते हैं। रथ में सवार देवडांगर चंवर से लोगों को सहलाते हुए अक्षत (चावल) फेंककर मनोकामनायें पूर्ण होने का आर्शीवाद देते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि मानों देवलोक से मनोकामनायें पूर्ण होने का आर्शीवाद देने स्वयं देवगण धरती पर अवतरित हुए हैं।

इसी से जुड़ा दूसरा प्रसंग क्वांरकोली के ऐड़ी मंदिर का है। जहां पर जोशी भाईयों द्वारा पूर्णागिरी से लाया गया कलश रखा था। इसके बारे में जनश्रुति है कि क्योंकि कलश स्वयं ही ऐड़ी मंदिर से अपने स्थान पर चला गया था, बेवजह ऐड़ी को उलाहना का भागीदार बनना पड़ा

था। जोशी भाईयों की बेवजह नाराजगी और अपमान से ऐड़ी रुष्ट होकर वहां से लगभग 02 किमी० नीचे टनकपुर–पिथौरागढ़ सड़क मार्ग पर खोलासुनार के कांदला (कांला) चले गये। जिसे आज भी पुरानी ऐड़ीद्यो (पुराना ऐड़ी मंदिर) कहा जाता है। इस स्थान से नीचे पुण्येश्वर गाड़ में दांत निकले हुए बच्चों की मृत्य होने पर शवदाह किया जाता था। शवदाह की दुर्गध ऐड़ी मंदिर तक भी आती थी। उस दुर्गध से उठकर ऐड़ी मल्लाखोला आ गये। ग्रामवासियों ने ऐड़ी मंदिर स्थापित कर अपने ईष्ट के रूप में पूजा प्रारम्भ की। ब्यानधुरा से आये ऐड़ी देवता खोलासुनार एवं पम्दा गांवों के लोगों के ईष्ट के रूप में पूजित हैं। जिस प्रकार माँ भगवती के प्रति लोगों में आस्था है, ऐड़ी भी ईष्ट के रूप में अपार श्रद्धा से पूजे जाते है। आज भी गांव के लोग फसल की पहली उपज ऐड़ी मंदिर में चढ़ाते हैं। ऐड़ी के प्रति आस्थावान हैं सुख–दुःख में ऐड़ी को सहायक मानते हैं। चीड़ के वृक्षों के मध्य स्थित ऐड़ी मंदिर के पास अन्य देवी देवताओं के मंदिर भी स्थित है। नवरात्र की पंचमी के दिन यहां पर जागर की परम्परा है। नवरात्रियों में गांव से पलायन कर चुके लोग भी देवपूजा के लिए यहां आते है। मंदिर परिसर में असीम शांति की अनुभूति होती है।

i|pe|[kh egkno efnj Vudi|j

टनकपुर बस स्टेशन से उत्तर की ओर पूर्णागिरी मार्ग में पानी की टंकी के पास पंचमुखी महादेव मंदिर स्थित है। जो श्रद्धालुओं की अगाध आस्था का केन्द्र है। मंदिर के पुजारी श्री देवी दत्त बिष्ट जी बताते हैं कि सन् 1910–15 में टनकपुर में रेलवे लाईन बिछाने के दौरान इस मंदिर का निर्माण हुआ। मंदिर की मूर्ति के पांच मुख, भद्र, शिवजी, यमराज, ब्रहमा, विष्णु के प्रतिरूप हैं। पुजारी जी के अनुसार–घनश्याम दत्त बिष्ट चम्पावत (सौंज वाले) धर्मानन्द तिवारी (धौन) एवं लक्ष्मीदत्त को सपना हुआ कि जहां पर पांडवों ने यज्ञ किया था वहां ब्रह्मकुंड है, भंवर में फंसा हूँ मुझे निकालकर लाओ, तीन लोगों को एक साथ एक सा सपना कौतुहल का विषय बन गया तीनों विचार विमर्श के बाद ब्रह्मकुंड गये, (पहले ब्रह्मकुंड में जनेऊ, यज्ञोपवित संस्कार होते थे) ब्रह्मकुंड में इन्होंने शिवलिंग तैरते हुए देखा। घनश्याम बिष्ट तीनों में छोटे थे। धर्मानन्द तिवारी एवं लक्ष्मीदत्त ने उन्हें धोतियों से बांधकर भंवरकुंड में भेजा, भंवरकुंड में जाते ही शंकर जी की मूर्ति उनके कंधे में

आ गयी। इन्हें निकाला और बाहर रख दिया। मूर्ति रखने के बाद तीनों विश्राम करने लगे। लक्ष्मी दत्त जी इसे अस्पताल रोड में अपने बंगीचे में स्थापित करना चाहते थे जबकि धर्मानन्द तिवारी जी रेलवे स्टेशन चौराहे पर। मूर्तियाँ उठाने लगे तो उठा नहीं पाये। फिर निर्णय लिया कि इसे यहीं पर स्थापित किया जाय। बताया जाता है कि ये शिवलिंग पंचेश्वर से बहकर यहाँ आये थे। पश्चात् घनश्याम दत्त बिष्ट जी पुजारी नियुक्त हुए अब उनके पुत्र देवी दत्त बिष्ट मंदिर के पुजारी है, जो श्रद्धाभाव से देवपूजा के साथ–साथ मंदिर की देखरेख भी करते हैं। पंचमुखी मंदिर परिसर में पंचमुखी महादेव धर्मशाला बना है जिसमें पूर्णागिरी मेले के दौरान दर्शनार्थी आवासीय सुविधा से लाभान्वित होते हैं। मंदिर से डेढ़ किलोमीटर की दूरी पर नेपाल के ईष्ट सिद्धबाबा का मंदिर है। जिनके प्रति लोगों में अगाध आस्था है।

ojnkf;uh efnj&cjnk[kku

जनपद के सुदूरवर्ती क्षेत्र बरदाखान में स्थित मां वरदायिनी का मंदिर क्षेत्रीय लोगों की अपार श्रद्धा का केन्द्र है। लोहाघाट–भनोली–अल्मोड़ा मोटर मार्ग में लोहाघाट से 22 किलोमीटर की दूरी पर स्थित इस मंदिर के बारे में बताया जाता है कि पूर्व में अल्मोड़ा चम्पावत पैदल मार्ग का यह मुख्य पड़ाव था। आते जाते यात्री यहां पर विश्राम किया करते थे। मंदिर के समीप स्थित नौले के पास एक स्वच्छ बर्तन (तौली) रहता था। भूखे यात्री श्रद्धा के साथ इस बर्तन को नौले में रखते थे तो खीर तैयार होकर आती थी। जिसे खाकर यात्रीगण भूख मिटाते थे और पुनः बर्तन साफ करके नौले के पास रख देते थे। यह क्रम चलता रहता था। यात्रीगण अक्सर यहां पर विश्राम किया करते थे और देव कृपा से प्राप्त भोजन ग्रहण करते थे। बताया जाता है कि एक बार एक यात्री ने खाने के बाद जूठा बर्तन नौले में डाल दिया तब से नौले में खीर बनना बन्द हो गया। क्षेत्र के लोग यहां पर स्थित शिवलिंग का पूजन किया करते हैं पूजा के लिए लाल टीका (पिठयाँ) का प्रयोग वर्जित है। पुत्र प्राप्त हेतु शिवरात्रि के दिन यहां पर जागरण करने की परम्परा रही है। माना जाता है कि शिवरात्रि के दिन रात्रि जागरण से निःसन्तान दम्पत्ति को पुत्र प्राप्ति होती है। क्षेत्र की जनता में माँ वरदायिनी के प्रति अपार श्रद्वा है गरम घाटी में स्थित इस मंदिर के नौले का शीतल जल यहां के पेयजल की आपूर्ति करता है। वैसे तो वर्षभर स्थानीय श्रद्वालुओं की यहां पर

आवाजाही रहती है। लेकिन शिवरात्रि के दिन लगने वाले मेले में पूरे क्षेत्र के लोग पूजा अर्चना के लिए एकत्रित होते हैं। माना जाता है कि वरदायिनी के इस मंदिर के नाम से ही इस क्षेत्र का नाम बरदाखान पड़ा। मंदिर परिसर में प्राचीन समय से ही एक छायादार वृक्ष है। जिसकी पत्तियाँ पीपल के समान एवं टहनियां जामुन के समान है। पेड़ कई पेड़ों से मिलता जुलता लगता है। किन्तु अभी तक इस पेड़ का नाम मालूम नहीं हो सका।

nohèkkj efnj ykgk?kkV

लोहाघाट शहर से मात्र 05 किलोमीटर की दूरी पर स्थित देवी का मंदिर जनपद के लोगों की अपार आस्था का केन्द्र है। कलीगांव–डेंसली की ऊपरी चोटी पर स्थित देवी मंदिर लोहाघाट–पंचेश्वर सड़क मार्ग से डिग्री कालेज बाईपास सड़क पर स्थित है। दूसरी ओर लोहाघाट से डिग्री कालेज बाईपास सड़क से मंदिर तक आवागमन की सुविधा है। देवीधार के मंदिर की स्थापना के संबंध में किंवदंति है कि एक समय इस क्षेत्र के गांवों में महामारी फैल गयी। जिससे अपार जनहानि हुई। अंतिम उपाय देवी की स्तुति के लिए सभी स्थानीय लोगों ने इस शिखर पर आकर माँ भगवती को पुकारा। कहा जाता है कि उनकी प्रार्थना को स्वीकार करते हुए माँ ने भक्तों को साक्षात दर्शन दिये। समस्त जनों के कष्टों का निवारण हो गया। तभी से आषाढ़ पूर्णिमा को सामूहिक रूप से माँ की पूजा अर्चना की जाती है और विशाल मेले का आयोजन किया जाता है।

देवीधार के संबंध में एक अन्य जनश्रुति इस प्रकार प्रचलित है कि प्राचीन काल में यहां एक सुन्दर नगर था। जिसकी प्राचीनता का प्रमाण यहां स्थित रानी नौला है। कहा जाता है कि एक विशालकाय अजगर ने इस क्षेत्र के लोगों को शिकार बनाना शुरू कर दिया था। कोई भी व्यक्ति अजगर का मुकाबला नहीं कर सका। अतः भयभीत होकर लोगों ने उस स्थान को त्याग दिया।

लोकमत है कि अज्ञातवास की अवधि में जब भीम उस स्थान पर आये तो अजगर से उनका मुकाबला हुआ। उन्होंने अजगर के टुकड़े टुकड़े कर इधर–उधर फैंक दिये। इस क्षेत्र में बिखरे हुए सफेद पत्थरों (डांसी पत्थर) के विषय में कहा जाता है कि ये अजगर की पीठ के सफेद छल्लों से बने हैं।

देवीधार लोहाघाट के गोरखों की भी आराध्य देवी है। उनका कहना है कि जब वे लोहाघाट में बसे तो उस समय महामारी का प्रकोप फैला हुआ था। गोरखों के पूर्वजों ने आत्मरक्षा के लिए मां भगवती की अर्चना की। देवी कृपा से कोई जनहानि नहीं हुई। प्रत्येक तीसरे वर्ष उनके द्वारा देवी का वृहद रूप में सामूहिक पूजन का आयोजन किया जाता है।

देवीधार के पश्चिम में स्थित बाणासुर के नगर शोणितपुर से भी इस स्थान का संबंध जोड़ा जाता है। जनश्रुति है कि असुर सम्राट बाणासुर यहां पर नित्य माँ भगवती की आराधना करने आता था।

वैसे तो देवीधार के मंदिर में श्रद्धालु देवी के दर्शन के लिए आते रहते हैं। किन्तु आषाढ़ी पूर्णिमा को यहां पर एक भव्य धार्मिक मेले का आयोजन होता है। मेले की पूर्व संध्या पर कलीगांव, डैंसली, और चौड़ी गांवों में देवी के जागर गाये जाते हैं। देवी शक्तियों का अवतरण होता है। जो अपने भक्तों को आर्शीवाद देती हैं। अवतरित देवी शक्तियों को गाजे–बाजे के साथ रथों में बिठाकर पूर्णिमा के दिन मंदिर में लाया जाता है। देवरथों को कन्धों पर लाते हुए उनके साथ भारी जनसमूह मंदिर प्रांगण में पहुंचता है। देवरथों को मंदिर की परिक्रमा करायी जाती है। इसके साथ ही मेला प्रारम्भ होता हैं।

कुछ वर्षों पूर्व तक यहां पर एक दिन का मेला लगता था जो केवल लोहाघाट तक ही सीमित था। विगत 15 वर्षों से क्षेत्र के जागरूक युवकों के प्रयासों से इसे महोत्सव का रूप दिया जाने लगा है। 5 दिन तक चलने वाले इस महोत्सव को भव्य रूप देने के लिए निकटवर्ती विद्यालयों के विद्यार्थियों की खेलकूद प्रतियोगिता, सांस्कृतिक कार्यक्रम एवं प्रदर्शनी तथा सांस्कृतिक संध्याओं का आयोजन किया जाता है। वर्तमान में देवीधार महोत्सव जनपद के प्रमुख महोत्सवों में से है।

>ekèkjh efnj

लोहाघाट और बाराकोट के मध्य घने वनों के बीच लोहाघाट से टनकपुर–पिथौरागढ़ मुख्य मार्ग में दो किलोमीटर की दूरी पर पाटन पाटनी गांव के एक किलोमीटर ऊंचे शिखर पर मां झूमादेवी का मंदिर स्थित है। मां भगवती के इस मंदिर में पाटन, राइकोट सहित निकवर्ती गांवों एवं लोहाघाट शहर के श्रद्धालुओं द्वारा पूजा अर्चना की जाती है। मां भगवती के इस मंदिर को झूमादेवी के नाम से जाना जाता है। यह

स्थान समुद्रतल से लगभग 1980 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। 1918 में निर्मित इस मंदिर से हिमालय की हिमाच्छादित पर्वत श्रृंखलाओं के साथ ही सीमान्त जनपद पिथौगराढ़, अल्मोड़ा तथा नैनीताल जनपद के कई दर्शनीय स्थल दृष्टिगत होते हैं।

किंवदंति है कि झूमाधूरी का स्थान एक विकट चट्टान पर था। मां की उपासना करने पर गांव के एक निःसंतान व्यक्ति को सन्तान की प्राप्ति हुई थी। उस व्यक्ति की प्रेरणा से गांव वालों द्वारा वर्तमान मंदिर स्थल पर एक मेले का आयोजन प्रारम्भ किया गया। मेले कि तिथि भाद्रपद में नन्दाष्टमी को निर्धारित की गयी क्योंकि नंदा चंद वंशीय राजाओं की कुलदेवी रही हैं। अतः माना जाता है कि झूमा मेला लगभग डेढ़ सौ वर्षों से मनाया जाता रहा है। विगत कई वर्षों से झूमाधूरी देवी का अवतरण पाटनी लोगों पर होता है। वही देवरथ में बैठकर मंदिर तक जाते हैं। झूमाधूरी के प्रति लोगों में अटूट श्रद्धा है।

मंदिर में मूर्ति के समक्ष रखे एक बड़े पत्थर के संबंध में कहा जाता है कि एक नेपाली व्यक्ति उसे मंदिर निर्माण के लिए पीठ पर रखकर वर्षात में काली नदी पार कर लाया था। भाद्रपद शुक्ल पक्ष अष्टमी नन्दाष्टमी को यहाँ पर विशाल मेले का आयोजन किया जाता है। पाटन और रायकोट गावों से देवरथ मंदिर की ओर ले जाते हैं। देवरथों में माँ भगवती के रूप में अवतरित देवडाँगर सवार होते हैं। ऊँची पहाड़ी की ओर मोटे–मोटे रस्सों से खींचकर देवरथों को माँ के मदिर में ले जाया जाता है। रथों में सवार देवडाँगर अक्षत फैंक कर सभी को आशीर्वाद देते हैं। श्रद्धालु इस पावन पर्व के दिन इस मंदिर में देव आर्शीवाद के लिए आते हैं। पूर्णिमा से पहली रात्रि को मंदिर में जागरण होता है। कहते हैं कि इस मंदिर में एक रात के जागरण से मनोकामना पूर्ण होती है।

वर्तमान में मेला समिति द्वारा मेले को भव्य रूप दिया जा रहा है। विद्यालयों की कई प्रतियोंगिताएं एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है। आस्थावान युवाओं द्वारा इस पौराणिक मेले के प्रति जागरूकता से यह मेला भव्य रूप लेने लगा है।

<jukFk efnj

अपनी चमत्कारिक शक्तियों के लिए प्रसिद्ध बाबा ढेरनाथ का मंदिर लोहाघाट–हल्द्वानी मोटर मार्ग में लोहाघाट से 8 किलोमीटर की दूरी पर डूंगरी फर्त्याल नामक स्थान पर स्थित है। मन्दिर तक पहुंचने के लिए

सलना पुल से लगभग 200 मीटर पहले बायीं ओर सड़क मार्ग बना है, सलना–ढेरनाथ नाम से लगभग 01 किलोमीटर लम्बी यह सड़क ढ़ेरनाथ मंदिर तक बनी है। मंदिर के लिए चौमला से पैदल मार्ग भी है। चौमला (बिशुंग) में मंदिर तक पहुंचने के लिए प्रवेश द्वार बना है। देवदार वृक्षों के मध्य अत्यन्त रमणीक इस स्थल से चारों ओर अलौकिक प्राकृतिक दृश्यों का अवलोकन होता है। हिमालय की प्रमुख चोटियों का दृश्य हो या लोहाघाट शहर का विहंगम दृश्य या फिर बाणासुर का किला व किले की सतह पर फसलों से लहलहाता बिशुंग का अति उपजाऊ मैदान इस स्थल से मनमोहक लगते हैं।

डुंगरी फर्त्याल में मंदिर के पास ही रहने वाले मेरे शिक्षक मित्र उत्तम सिंह फर्त्याल जी बताते हैं कि लोकमतानुसार जब बाबा ढेरनाथ बिशुंग में आये तो उस समय सूखे की स्थिति थी बाबा को पानी नहीं मिल सका तो उन्होंने वर्तमान मन्दिर के पास ही एक स्थान पर अपना चिमटा मारा तो पानी का स्रोत उत्पन्न हो गया। यह स्रोत ढेरनाथ नौला नाम से जाना जाता है आज भी वर्ष भर पानी से भरा रहने वाला यह स्रोत क्षेत्र को शुद्धपेयजल की पूर्ति करता है। किसी भक्त से बाबा ने कन्दमूल फल (तरूड़/तैड़) लाने के लिए आग्रह किया भक्त ने अच्छे–अच्छे फल अपने घर में छिपाकर रख दिये और शेष फल बाबा को देकर कहा कि खोदने पर मात्र ये ही फल प्राप्त हो सके। बाबा ने शान्त भाव से फलों को ग्रहण कर लिया लेकिन भक्त जब घर गया तो कन्द मूल फल के स्थान पर टोकरी पर सांप बैठा था। उसने बाबा की शक्ति से अभिभूत होकर फल बाबा को सौंपने का मन बनाया तो फिर से टोकरी में कन्द–मूल फल अपनी स्थिति में मिले, फलों को बाबा को भेंटकर उसने क्षमा याचना की। यह भी कहा जाता है कि जब बाबा भण्डारा लगाते थे तो तेल की चाशनी (कड़ाही) में तेल की कमी पड़ने पर ढ़ेरनाथ नौले के जल से तेल की पूर्ति करते थे। प्रसाद के बर्तन को चादर से ढककर रखते थे। थोड़े से प्रसाद से बड़े जन समूह को प्रसाद बंटता था। भक्तों की संख्या चाहे जितनी बड़ी हो उसी प्रसाद से पूर्ति हो जाती थी।

फर्त्यालों के ईष्ट देवता ढ़ेरनाथ की चमत्कारिक शक्तियों से पूरे क्षेत्रवासी प्रभावित थे। लेकिन रीठासहिब में गुरुनानक के समक्ष अपने चमत्कारिक शक्तियों को प्रभावहीन होते देखकर अपने को अपमानित

महसूस किया और उक्त स्थल पर जिन्दा ही समाधि ले ली। इस सन्दर्भ में भी जनश्रुति है कि जब बाबा मंदिर से कहीं अन्यत्र जाने की बात कह कर निकले तो कुछ भक्तजन उनके साथ–साथ चले गये और बाबा से इसी स्थल पर रहने की विनती की। बाबा बोले मेरे पीछे मत चलो बाबा तो वहीं हैं (ढेरनाथ में) जब भक्तजन वापस आये तो भक्तों को लगा कि बाबा धरती में समा रहे हैं तो भक्तों ने उन्हें रोकना चाहा बाबा धरती में समाते जा रहे थे एक भक्त ने बाबा के सिर के बाल पकड़े तो चुटिया उसके हाथ में रह गयी, बाबा समाधिस्थ हो गये। जहां पर बाबा ने समाधि ली उसी स्थान पर मन्दिर स्थापित किया गया। अत्यन्त रमणीक एवं मनोहारी दृश्यावलोकन के इस धार्मिक स्थल पर अलौकिक शान्ति एवं आनन्द की अनुभूति होती है।

Ekgkno efnj jxM

जनपद चंपावत के बाराकोट विकासखण्ड के कस्बे बाराकोट के मुख्य प्राचीन स्थल बानैकोट का पूर्व पद बानै तथा बाराकोट पर्वत श्रृंखला के समान्तर गाड़पार पूर्व की पर्वतमाला की धार के दोनों ओर बसे गांवों के समूह को रेगडू तथा दोनों पर्वत श्रृंखलाओं पर बसे गांवों के समूह को मिलाकर रेगडूवान (रेगडू–बान) कहा जाता है। रेगडूवान पट्टी काली कुमाऊं की प्रसिद्ध प्रशासनिक ईकाई थी। इसके पश्चिमोत्तर में पनार नदी, काकड़ी घाट, सरयू नदी सोर (पिथौगराढ़) तक अल्मोड़ा की सीमा को निर्धारित करती है, लोहाघाट–पिथौरागढ़ राष्ट्रीय राजमार्ग पर लोहाघाट से 06 किलोमीटर की दूरी पर घने देवदार वनों के मध्य स्थित कस्बा मरोड़ाखान के नाम से जाना जाता है। मरोड़ाखान से रेगडू तक 07 किलोमीटर सड़क सम्पर्क मार्ग है एक पर्वत श्रृंखला पर रेगडू के नौ गांव स्थित है। रेगडूं में स्थित महादेव मंदिर अत्यन्त रमणीक स्थल है यहां से पिथौगराढ़ जनपद की अधिकांश चोटियां, नेपाल का कतिपय पर्वतीय क्षेत्र एवं हिमालय की ऊंची चोटियों के विहंगम दृश्य दृष्टिगोचर होते हैं। महादेव मन्दिर रेगडू क्षेत्र के लोगों की अगाध आस्था का केन्द्र है। अत्यन्त रमणीक इस स्थल के कुछ क्षण ही रोमांचित करते हैं। यहां के महादेव शिव मन्दिर की महिमा बताते हुए गांव के बुजुर्ग मेहकम सिंह मेहता, गोपाल सिंह मेहता, भवान सिंह मेहता, महेश्वर सिंह मेहता आदि जन बताते है कि पुरातन में टनकपुर–अस्कोट पैदल मार्ग से मानसरोवर यात्री यहां आते थे जो साधु–सन्यासी मानसरोवर नहीं जा पाते थे यहां

विश्राम कर कैलाश यात्रा की अनुभूति करते थे। किंवदंति है कि रेगडू महादेव मंदिर से लगभग 200 मीटर की दूरी पर एक शिवलिंग था। गांव के एक अनुसूचित जाति के व्यक्ति की गाय इस शिवलिंग पर दूध देती थी। घर आकर दूध न देने पर वह व्यक्ति एक दिन गाय के साथ–साथ उस स्थल पर पहुंचा तो देखा कि गाय शिवलिंग के ऊपर दूध दे रही है। उसने क्रोधित होकर शिवलिंग पर प्रहार किया तो शिवलिंग का एक हिस्सा टूटकर वर्तमान महादेव मंदिर स्थित शिवलिंग से जुड गया। शिव ने उसे अभिशाप दिया कि तेरा वंश न तो बढ़ेगा न घटेगा। बताया जाता है कि वह परिवार अभी तक उतनी ही संख्या में है। मंदिर के भीतर सप्तमात्रिकाएं, नवदुर्गायें शिलाफलकों में बनायी गयी है। अत्यन्त आकर्षक देवी देवताओं की ये मूर्तियां मुख्य मंदिर के द्वार के दोनों ओर शोभायमान है। अपार श्रद्वा के इस केन्द्र में तामसिक भोजन व अभद्र व्यवहार सदैव वर्जित रहा है। जनश्रुति है कि श्रद्धा से भक्ति करने करने वालों को शिव ने वांछित फल दिये तो अनुचित व्यवहार का दण्ड भी दिया।

वर्षभर इस मंदिर में पूजा अर्चना होती है नवरात्रियों में पहली नवरात्रि से दशमी तक पूजा अर्चना, भक्तों के भोजन जलपान एवं देव सेवा कार्य के लिए नौ गांव रेगडू की बारी लगती है और बारी–बारी से प्रत्येक गांव के लोग देव कार्य में सहयोग करते हैं। पहली नवरात्रि से दशमी तक क्रमशः राई, खकोड़ा चाक, छन्दा, द्यारतोली, तल्ली गुरना, मल्ली गुरना, आगर, चौड़ा गांवों की बारी लगती है। पूरी नवरात्रियों में भण्डारे जागरण के साथ देव कार्य सम्पन्न होते है। जिसमें क्षेत्र की जनता अगाध आस्था के साथ सहयोग करती है। महादेव की शक्तियों के बारे में बताया जाता है कि पूर्व में नदी पार से हीरा नायक नाम का पुजारी यहां पूजा करते आता था। मंदिर में भोग लगाने के बाद ही पुजारी के भोजन करने की परम्परा थी एक दिन वर्षा अधिक होने से नदी का पानी बढ़ गया, हीरा नायक ने मंदिर पहुंचने से पहले चौड़ाशाह नामक स्थान से नीच बैठकर जौं की बाली भूनकर बाड़ी खा दी। वहीं पर उसे शेर ने खा दिया था। तब से वह स्थान 'हीरानायक दुंगी' नाम से प्रसिद्ध है। पश्चात् गुरना के ओली इस मंदिर के पुजारी है। नवरात्रियों में आयोजित जागरों में अनुसूचित जाति के परिवार लकड़ी पराल आदि की व्यवस्था करते हैं। अपार श्रद्वा के इस केन्द्र महादेव मंदिर के परिसर में एक चौपाल के चारों ओर वीर स्तम्भ (बिरखम) बने

हैं जिन पर लेख अस्पष्ट है। इतिहास वेत्ताओं के अनुसार ये सभी बिरखम रेगडू तथा बापरू ग्राम समूहों में बहुतायत से बसे मेहता लोगों के पूर्वजों की स्मृति में बनाये गये हैं। जो इस क्षेत्र की ऐतिहासिक धरोहर हैं।

आस्था एवं पर्यटन की दृष्टि से महत्वपूर्ण इस स्थल का सौन्दर्यीकरण प्रगति पर है। शासन–प्रशासन से इस क्षेत्र की प्रगति की क्षेत्रवासियों को अपेक्षा है।

ckjkgh efnj nohèkjk

लोहाघाट से हल्द्वानी सड़क मार्ग पर लोहाघाट से 45 किलोमीटर की दूरी पर स्थित मां बाराही का मंदिर दैवीय शक्ति एवं पाषाण युद्व (बग्वाल) के लिए ख्याति प्राप्त है। ऊंची पर्वत चोटी पर बने मंदिर परिसर से एक धार से दूसरी धार पर बनी पर्वत श्रृंखलाएं हिमालय पर्वत तक इस तरह दृष्टिगत होती हैं मानो सारी पहाड़ियां हिमालय में समाने को आतुर हों। अनुपम प्राकृतिक सौन्दर्य का यह दृश्य जिसने भी देखा होगा चिरस्मृत रहेगा। जनपद चंपावत का यह ग्रामीण कस्बा अल्मोड़ा, नैनीताल तथा चंपावत तीनों जनपदों की सीमाओं से जुड़ा है। देवीधूरा का शाब्दिक अर्थ है ''देवी का वन'' जनश्रुति के अनुसार देवीधूरा को पूर्णागिरी का ही एक पीठ माना जाता है। जहां चंपादेवी व ललित जिह्वा महाकाली को प्रतिष्ठित किया गया है।

मंदिर के पुजारी मंदिर से दो किलोमीटर नीचे स्थित गांव गुरना जनपद नैनीताल निवासी राम दत्त पुजारी जी बताते हैं कि देवी का डोला बैराठ (नेपाल) से एक क्षत्रिय परिवार जिनके वंशज वर्तमान में चोरगलिया में निवास करते हैं, लेकर आया था। देवी उस परिवार की इष्ट देवी है और देवी के पुजारी, पुजारी जी के पूर्वज तिवारी परिवार था। लगभग 3 हजार वर्ष पूर्व यहां पर देवी का डोला लाया गया था। डोले के उपरी हिस्से में नेपाली भाषा में कुछ अस्पष्ट विवरण अंकित है। फुलाकोट (देवीधुरा) गांव के निवासी 72 वर्षीय बुजुर्ग उमेद सिंह चौहान जी पुजारी जी की बात पर सहमति व्यक्ति करते हुए बताते हैं कि देवी के प्रति अपार श्रद्धाभाव से चार खाम और तीन थोक के लोग परम्परागत रूप से देवी की पूजा अर्चना व प्रसिद्धबग्वाल (पत्थर युद्व) में प्रतिभाग करते हैं। देवीधुरा का देवीपीठ एक ऐसे स्थान पर स्थित है जहां पर चारों ओर से आने वाले मार्ग मिलते हैं प्राचीन में इस अंचल का मैदानी क्षेत्रों से सम्पर्क तथा व्यापारिक कारणों से आवागमन देवीधुरा से ही होता था।

देवीधुरा में देवी को बाराही अर्थात पृथ्वी मानकर उपासना की जाती है। मंदिर के निकट दो विशाल शिलायें आपस में प्राकृतिक रूप से सटी हुई हैं। शिलाओं के मिलन स्थल पर स्वतः निर्मित एक त्रिभुजाकार द्वार को देवी की योनि का प्रतीक मानकर पूजा जाता है। इन दोनों शिलाओं के बीच खुले संकरे मार्ग के एक ओर आच्छादन में बैठकर पुजारी लोग देवी के लिए भेंट, उपहार आदि प्राप्त करते हैं। देवी की पूजा का समय प्रातः 4 बजे से 6 बजे तक ब्रह्म मुहूर्त में होता है। लोक मान्यता है कि देवी को दिन और रात्रि में अवकाश नहीं मिलता है। अतः पूजा अर्चना के लिए यही समय उपयुक्त है। देवीधुरा में अनादिकाल से रक्षाबन्धन के अवसर पर असाड़ी का कौतिक मनाया जाता है जिसे लोग बग्वाल मेले के रूप में जानते हैं। इसका आयोजन देवी के प्रांगण में प्रतिवर्ष श्रावण शुक्ल एकादशी को पूजा के साथ प्रारम्भ होकर भाद्रपद कृष्ण द्वितीय तक चलता है। इसका मुख्य आकर्षण बग्वाल (पत्थर युद्व) के रूप में श्रावणी पूर्णिमा को आयोजित किया जाता है।

श्रावण शुक्ल एकादशी को पाषाण युद्व में भाग लेने वाले चारों खामों तथा तीनों थोकों के मुखिया बाराही देवी के मंदिर के पुजारी को साथ लेकर निर्धारित मुहूर्त में मंदिर में स्थित देवी डोले का पूजन करते है जिसे सांगी पूजन कहा जाता है। उसके बाद मंदिर में बाराही, महाकाली एवं सरस्वती की मूर्तियों से युक्त ताम्र पेटिका को भण्डार गृह से नन्द घर ले जाते हैं। अगले दिन मंदिर का पुजारी और बागड जाति का प्रतिष्ठित व्यक्ति आंखों पर काली पट्टी बांधकर पर्दे के पीछे मूर्तियों को दुग्ध स्नान कराते हैं तथा पुनः उसी ताम्र पेटिका में रख देते हैं पेटिका को डोली के रूप में मुचकुन्द आश्रम की परिक्रमा करायी जाती है।

पूर्णमासी के दिन चारों खामों के द्यौका (पाषाण युद्व करने वाले) अपने–अपने मुखियों के साथ गांवों से ढ़ोल नगाड़े के साथ जोश खरोश से युद्धस्थल की ओर प्रस्थान करने है। देवीधाम पहुंचकर ये देवी की गब्यूड़ी (गुफा) की परिक्रमा करते हैं। इसके बाद निकटस्थ खोलीखाड़ दुबचौड़ मैदान की परिक्रमा कर नियत स्थान पर खड़े होकर अपने–अपने मोर्चे संभाल लेते हैं। गहड़बाल, चम्याल, वालिक तथा चम्याल सभी खाम अपने–अपने मोर्चे पर पत्थर युद्ध के लिय तैयार होते हैं। युद्ध के लिए ये चारों खाम दो धड़ों में विभक्त हो जाते हैं। द्यौका मैदान में पत्थर एकत्र कर लेते हैं।

मारूबाजों की धुनों के साथ ही दोनों धड़ों में चारों खामों के मुखियाओं की अनुमति के पश्चात् बांस या रिंगाल से बनी छन्तोलियों (फर्रों या ढ़ालों) की आड़ में पाषाण युद्ध प्रारम्भ हो जाता है। कुछ ही क्षणों में पत्थरों की वर्षात सी होने लगती है। पाष्ण वर्षा इतनी भयंकर होती है कि कोई बाहरी व्यक्ति उस रण क्षेत्र में कदम रखने का साहस नहीं रख सकता है। इस अवधि में कई द्यौका पाषाणों के आघात से लहुलुहान हो जाते हैं। किन्तु आश्चर्य की बात यह है कि अब तक किसी भी व्यक्ति की मृत्यु इस पाषाण युद्ध में नहीं हुई है।

इस पाषाण युद्ध में जब यह एहसास हो जाता है कि एक व्यक्ति के बराबर रक्त प्रवाहित हो गया है तो पुजारी बांस से बने छत्रक की आड़ में चवर लेकर युद्ध क्षेत्र के मध्य पहुंचता है उसके शंखनाद करते ही युद्ध बन्द हो जाता है। युद्धरत चारों खामों के योद्वा बाराही देवी की जय–जयकार करते हुए युद्ध स्थल के मध्य आते हैं और एक दूसरे से गले मिलकर विदा होते हैं। घायलों का उपचार सिसोंण (बिच्छू घास) की टहनियों के स्पर्श से किया जाता है। वर्तमान में प्रशासन की ओर से चिकित्सा व्यवस्था उपलब्ध करायी जाती है तथा घायलों का विधिवत उपचार होता है।

बग्वाल (पत्थरों की मार) से सम्बन्धित अनेक लोकमान्यतायें प्रचलित हैं। पौराणिक गाथाओं के अनुसार चम्याल, लमगड़िया, गहड़वाल एवं वालिक खामों के लोगों द्वारा प्रतिवर्ष देवी को एक व्यक्ति की बलि दिये जाने की प्रथा थी। एक दिन जब चम्याल खाम की वृद्धा के एक मात्र पौत्र की बारी आयी तो वंश समाप्ति के भय से वृद्वा ने बाराही देवी की आराधना की। तप से प्रसन्न होकर बाराही देवी ने कहा कि यदि किसी तरह से उसके गणों को एक मानव के बराबर रक्त प्राप्त हो जाये तो वह बालक की बलि नहीं लेगी। चारों खामों के लोगों ने तय किया कि वे दो दल बनाकर एक दूसरे पर पत्थर मारेंगे तथा एक व्यक्ति के बराबर रक्त बहाकर माँ को प्रसन्न करेंगे। उसी समय से बग्वाल की परम्परा आरम्भ हुई।

इस रक्त प्रवाह के सम्बन्ध में लोगों की गहन आस्था है। स्थानीय लोगों की मान्यता है कि उनके इस बलिदान से प्रसन्न होकर देवी उन्हें सुख शांति व समृद्धि प्रदान करती है। बग्वाल विस्मयकारी एवं विचित्र है आध्यात्मिक एवं सास्कृतिक परम्पराओं के साथ ही पर्यटन की दृष्टि से इसका महत्व बढ़ता जा रहा है। वाह्य व्यक्तियों के लिए बग्वाल कौतुहल के रूप में है।

कहा जाता है कि जनपद चंपावत में प्राचीन काल में बीस स्थानों पर बग्वाल खेली जाती थी जिसे तत्कालीन अंग्रेज अधिकारी ट्रेल ने बन्द करवा दिया था किन्तु देवी शक्ति से प्रभावित होकर उसने देवीधूरा में बग्वाल की अनुमति दे दी थी।

वर्ष 2013 में माननीय न्यायालय के निर्देशानुसार जिला प्रशासन द्वारा पत्थर युद्धपर रोक लगाते हुए फूलों और फलों से प्रतीकात्मक युद्ध की अनुमति दी गयी। प्रशासन द्वारा बग्वाल के लिए फलों की व्यवस्था की गयी और स्थानीय फलों से बग्वाल खेली गई। लेकिन लोगों की आस्था और सदियों से चली आ रही परम्परा के प्रति उत्साह को शासन प्रशासन के प्रयास रोक नहीं सके। बताया जाता है कि मेले के अन्त में फिर भी खून बहा, देवी की इच्छानुरूप बग्वाल की परम्परा आंशिक रूप में बनी रही।

भारतीय रहस्यवाद के समर्थक रहे जिम कार्बेट के शिकार का यह प्रमुख क्षेत्र था। जनश्रुति के अनुसार यहां के बाघ जिसे देवी का बाघ माना जाता था, को मारने के लिए जिम कार्बेट ने अथक प्रयास किये और बाघ के साथ कई बार सामना होने के पश्चात् भी वह उसे नहीं मार सके। पुस्तिका गोरा साधू (जिम कार्बेट) में प्रकाश थपलियाल जी जिम कार्बेट के शब्दों को व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि उन्होनें यह माना कि ''आदम खोरों के शिकार के लिए मैं कई बार देवीधुरा गया और कभी ऐसा नहीं सुना कि मंदिर के बाघ ने आदमी की कोई मार की हो। इस लिए मै उम्मीद करता हूँ कि वह योद्धा एक बूढ़े सैनिक की तरह अपनी पूरी उम्र जी कर दुनिया से गया होगा।'' आस्था और पर्यटन का यह रमणीक स्थल जनपद का सुप्रसिद्ध दर्शनीय स्थल है। लोहाघाट से देवीधुरा जाते समय कुछ ही दूरी के बाद सड़क के समानान्तर दाहिनी ओर हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं के विहंगम दृश्य दृष्टिगत होते हैं।

j.kf'kyk@Hkhef'kyk

बाराही मंदिर देवीधुरा पाषाण युद्ध के लिए ख्याति प्राप्त है। बग्वाल (पत्थर युद्ध) के अतिरिक्त मंदिर परिसर में स्थित विभिन्न ऐतिहासिक एवं पौराणिक महत्व के स्थल दर्शनार्थियों के आकर्षण के केन्द्र है। मंदिर के द्वितीय प्रवेश द्वार के शीर्ष पर योनि मार्ग शिला के उपर एक विशाल शिला हैं, जिसे रणशिला या भीमशिला के नाम से जाना जाता हैं इस महापाषाण की सबसे बड़ी विशेषता इस पर लम्बाई में पड़ी दरार है।

रणशिला में पड़ी दरार के बारे में कहावत है कि एक बार पाण्डव इस पत्थर के उपर बैठकर देवी के साथ चौपड़ खेल रहे थे। चौपड़ खेलते वक्त देवी को महसूस हुआ कि समुद्र में किसी का जहाज डूब रहा है। देवी ने एक हाथ समुद्र में डाला और दूसरे हाथ से चौपड़ खेलती रही। सहसा भीम की दृष्टि देवी के हाथों में पड़ी जो पानी से भीगे हुए महसूस हुए। भीम ने इसका कारण जानना चाहा। देवी ने सत्यता से भीम को अवगत कराया। भीम को देवी की बातों पर विश्वास नहीं हुआ। भीम की शंका से क्षुब्ध होकर देवी अन्तर्ध्यान हो गयी। भीम ने देवी को ढूढ़ने के लिए इस विशालकाय शिला पर खड्ग से प्रहार किया। जिससे शिला के बीचों बीच चौड़ी दरार पड़ गयी। देवी पाण्डवों को दुबारा नहीं मिली। रण शिला का स्वरूप विशालकाय है और इस पर पड़ी दरार अभी तक विद्यमान है। शिला के शीर्ष भाग में चारों ओर रैलिंग बनाई गयी है। शिला पर चढ़ने के लिए सीढ़िया बनी हैं। शिला से चारों ओर मनमोहक दृश्य दृष्टिगत होते हैं। गहरी–गहरी घाटियां एवं हिमालय में समाने का आतुर हिमालय के समानान्तर फैली पर्वत श्रेणियाँ एवं चांदी सी चमकती बर्फ से लकदक प्रमुख हिमाच्छादित पर्वत श्रेणियों का दृष्य अति मनमोहक लगता है। दर्शनार्थियों को देवीधूरा के बग्वाल पर्व तक ही अपनी जिज्ञासा को सीमित नहीं रखना चाहिए बल्कि बाराही मंदिर के चारों ओर स्थित पुरातात्विक धरोहरों के भी दर्शन करने चाहिए।

pkj n;kyh lb

जनपद चम्पावत के लोकदेवताओं में सुंई के देवताओं को सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। सुई के डंगरियों (देव डांगरों) के मध्य अन्य देवडांगरों के अवतरित होने की सम्भावना कम रहती थी एक किस्सा भी कहा जाता था कि ''स्यूंक देवतौं में सबौकी औतरा ना भैं'' (यानी सुई के देवताओं में हर कोई अवतरित नहीं हो सकते)। लोहाघाट नगर से लगभग 6 किलोमीटर की दूरी पर लगभग 10 किलोमीटर की परिधि में एक अत्यन्त उपजाऊ क्षेत्र है जो छोटी–छोटी पहाड़ियों से घिरा अधिकांश समतल मैदान की तरह है। यह उपजाऊ मैदान सुई–बिशुंग के नाम से प्रसिद्ध है। आध्यामिकता के केन्द्र स्थल के साथ–साथ यह एक ऐतिहासिक स्थल भी रहा है। पुरातन मान्यताओं के अनुसार कुछ लोग सुंई को पौराणिक ग्रंथों में चर्चित शोणितपुरी का हिस्सा मानते हैं। इस स्थल का सम्बन्ध पौराणिक गाथा से जोड़ते हुए कहा जाता है कि यहां

बाणासुर का देवी से युद्ध हुआ था। जिसमें दैत्यों का इतना खून बहा कि सारी धरती लाल हो गयी, और लोहावती नदी उसी लहू की धार से उत्गमित हुई। गलचौड़ा, छमनियां चौड़ सहित इस क्षेत्र की लाल मिट्टी को इसी लहू के रंग से लाल होना बताया जाता है। कहा जाता है कि देवी ने जहां–जहां दैत्यों का संहार किया, वहीं पर देवी–मन्दिर बनाये गये, सुई में स्थित चारों देवी के मंदिर (चार द्योली) इस घटना के स्मारक बताये जाते हैं। रचनाकारों, लेखकों ने इन चार द्योली का वर्णन करते हुए लिखा है सुई की चार द्योली तुमरों ध्यान जागो'' के बोल के साथ भगवान सूर्णनारायण (आदित्य महादेव) जगदम्बा (भगवती) का स्मरण सदैव रहेगा। सुई भगवती मन्दिर के पुजारी एवं पुरोहित रमेश चन्द्र चौबे जी बताते है कि इन प्रसिद्ध मंदिरों के बारे में एक मान्यता यह भी है कि पुरातन में चार धाम यात्रा बहुत कठिन थी, चार धाम यात्रा से वापस आना काफी मुश्किल होता था। कुछ लोग तो चार धाम यात्रा में जाने से पूर्व अपना श्राद्ध, तर्पण कर जाते थे। चार धाम यात्रा से लोग प्रतिमूर्ति स्वरूप देवी की मूर्ति ही अक्सर लाते थे। जिन्हें मन्दिर के रूप में स्थापित किया गया, सुई का आदित्य महादेव (सूर्य मन्दिर) कुमाऊँ का एकमात्र सूर्यमन्दिर है। चौबे जी के अनुसार सुई की चार द्योली को चार धाम के रूप में भी माना जाता है। यहां की पूजा पद्धति चार धाम की पूजा पद्धति से मिलती–जुलती है। आज भी सुई के मन्दिरों की पूजा परम्परागत रूप से की जाती है। यहां माँ भगवती की पूजा चौबे लोगों द्वारा की जाती है। प्रत्येक वर्ष श्रावण पूर्णमासी से दूसरे वर्ष की श्रावण पूर्णमांसी तक एक वर्ष के लिए मंदिर में पूजा के लिए पुजारी की बारी लगती है। वर्ष भर श्रद्धापूर्वक पूजा करते हुए पुजारी मंदिर में रहकर स्वयं भोजन बनाते है और एक निश्चित श्रोत के जल से देवताओं को स्नान कराते है तथा स्वयं के उपयोग के लिए भी इसी जल श्रोत के पानी का प्रयोग करते हैं। पुजारी के लिए वर्ष भर जूते–चप्पल पहनना, तामसी भोजन ग्रहण करना, भोग–विलास एवं आकर्षक लिबास का पहनावा वर्जित होता है। धोती–कुर्ता सामान्य लिबास इनका पहनावा होता है।

इसी प्रकार आदित्य महादेव की पूजा 'पुजारी' लोगों द्वारा की जाती है। आदित्य महादेव की पूजा भी मां भगवती की पूजा के समान विधान से होती है। विशेष पर्वों पूर्णमासी, आमावस्या, संक्रान्ति, शुक्ल पक्ष–कृष्ण पक्ष की षष्ठी तिथि को पुजारियों द्वारा पांच गांव सुंई और बीस गांव

बिशुंग के सभी परिवारों से दूध–चावल लेकर मंदिरों में पूजा अर्चना की जाती है एवं देवताओं को दूध अर्पित किया जाता है।

यहां की परम्परानुसार श्रावण शुक्ल एकादशी को मां भगवती की गुप्त प्योली (प्रतिमूर्ति) सुंई विशुंग के देवडांगरों की उपस्थिति में भगवती मन्दिर से एक निश्चित मार्ग से आदित्य महादेव मन्दिर में लाई जाती है दो दिन बाद त्रयोदशी एवं चतुर्दशी के दिन रात्रि जागरण किया जाता है और सर्वमनोकामना पूर्ण किये जाने की आराधना की जाती है। कहा जाता है कि निःसन्तान महिलाओं को जागरण से सन्तान प्राप्ति का फल प्राप्त होता है। देवडांगरों द्वारा देव रूप में अवतरित होकर क्षेत्र की सुख शान्ति एवं मनोकामना पूर्ण होने का आशीर्वाद दिया जाता है।

पूर्णिमा के दिन आदित्य महादेव मन्दिर के प्रांगण में विशाल मेला आयोजित किया जाता है। सायं 04 बजे देवडांगरों को दूध एवं जल से स्नान कराया जाता है। श्रद्धालुओं की भीड़ देवताओं से आशीर्वचन के लिए उत्सुक होकर जयकारे लगाती है। सभी को सर्वमनोकामना पूर्ण होने का आशीर्वचन देते हुए देवडांगर देवरथ में सवार होते हैं। अन्य स्थानों की तरह इस देवरथ को रस्सियों के सहारे नहीं खींचा जाता है। इसे सीधे कन्धों में रखकर देवयात्रा कराई जाती है हवा के वेग के समान चलने वाले इस रथ को ''वायुरथ'' कहा जाता है। आदित्य महादेव मन्दिर से सुंई, पऊ, चनकांडे, सुंईडूंगरी, खैसकांडे, सुई के पांच गांवों से होकर यह यात्रा बिशुंग में बुड़चौड़ा तक जाती है। बुडचौड़ा में देवडांगरों को देवस्नान कराया जाता है और कर्णकरायत, मल्लाढेक, चौड़ाढ़ेक, आदि बीस गांव बिशुंग की परिक्रमा करते हुए लगभग 4–5 घण्टे में पुनः आदित्य देव मन्दिर में वायुरथ के साथ देव स्थापना होती है। यह परिक्रमा अत्यधिक दर्शनीय और रोमांचक होती है ऊंचे नीचे रास्तों में अपने कंधों पर देवरथ को वायु के वेग के समान 5 गांव सुई और बीस गांव बिशुंग की परिक्रमा कराना श्रद्धालुओं की देवी के प्रति अगाध आस्था प्रदर्शित करती है। देवरथ के साथ ही मां भगवती की ''प्योली'' (प्रतिमूर्ति) भी साथ ले जायी जाती है। कड़ाई मां के मन्दिर में कोटमेहरा के लोग देवी के दर्शन एवं पूजा अर्चना करते हैं। पश्चात ''प्योली'' आदित्य महादेव मन्दिर होते हुए लगभग 100 मीटर नीचे स्थित भगवती के मन्दिर में स्थापित की जाती है। इस रोमांचक देवयात्रा में सुंई बिशुंग के साथ–साथ लोहाघाट शहर और आस–पास के गांवों से सैकड़ों लोग देव दर्शन करते हैं।

इसके अतिरिक्त यहां पर भूमिया, कड़ाई, झुम्या, गलचौड़ा आदि मन्दिर श्रद्धालुओं की श्रद्धा के केन्द्र हैं। वर्ष भर इन मन्दिरों में पूजा अर्चना की जाती है। धार्मिक पर्वों में इन मन्दिरों में श्रद्धालुओं की भीड़ रहती है। लोहाघाट–बाराकोट सड़क मार्ग में लोहाघाट से 6 किलोमीटर की दूरी पर स्थित गलचौड़ा बाबा भी सुई–पऊ के आराध्य देव हैं। गलचौड़ा बाबा का मन्दिर सड़क के समीप ही घने देवदार वनों के मध्य स्थित है। अति प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण अति रमणीक इस स्थल पर कुछ क्षण बैठने पर अलौकिक आनन्द की अनुभूति होती है। इस मन्दिर के पास पुरातन वीर स्तम्भ (बिरखम) आज भी मौजूद हैं। पत्थरों से निर्मित इस स्तम्भों (बिरखमों) में देवी–देवताओं की आकृतियां बनी हैं। जिन्हें कत्यूरी शासन काल में निर्मित माना जाता है। लोक जागर में बावन वीरों में गलचौड़ा बाबा की प्रधान वीर माना गया है। सुई–बिशुंग क्षेत्र के साथ–साथ बाराकोट–लोहाघाट के आस–पास के लोक यहां पूजा अर्चना करते हैं। अति रमणीक इस स्थल के निकट कुछ फिल्मों का फिल्मांकन भी हुआ है।

_"k'oj egknso efnj ykgk?kkV

टनकपुर–पिथौरागढ़ राष्ट्रीय राजमार्ग पर लोहाघाट शहर के निकट लोहावती नदी के किनारे अगाध आस्था का केन्द्र ऋषेश्वर महादेव मंदिर स्थित है। घने देवदार वनों के मध्य स्थित मंदिर समूह में ऋषेश्वर महादेव सहित अनेक देवी देवताओं के मंदिर शोभायमान हैं। प्रसिद्ध कैलाश मानसरोवर यात्रा का यह महत्वूपर्ण पड़ाव रहा है। मानसरोवर यात्रा के द्वौरान लोहावती नदी के स्नान की ग्रन्थों में महत्ता वर्णित है। पौराणिक मान्यता है कि इस स्थल में सतयुग में सप्त ऋषियों ने तपस्या कर महादेव की असीम कृपा प्राप्त की थी। इसीलिये इसे ऋषेश्वर (ऋषेश्वर) नाम से जाना जाने लगा।

पृथ्वीलोक में शिव महिमा सर्वाधिक वर्णित है तथा शिव सर्वत्र पूज्य हैं। पौराणिक ग्रन्थों में शिव महिमा को वर्णित करते हुए कहा है कि संसार में ऐसी कोई जगह नहीं है जहां शिव नहीं हैं। शिव की पूजा शिव लिंग के रूप में की जाती है। पौराणिक मान्यताओं के अनुसार जब शिवलिंग के भार से पृथ्वी दबने लगी तो देवताओं के आपसी विचार मंथन के बाद निश्चय हुआ कि विष्णु सुदर्शन चक्र से लिंग को काट कर तमाम खण्डों में विभक्त कर दें। शिवलिंग के नौ खण्डों को–हिमाद्रि खण्ड,

मानस खण्ड, केदार खण्ड, पाताल खण्ड, कैलाश खण्ड, काशी खण्ड, रेवाखण्ड, ब्रह्मोत्तर खण्ड, नगर खण्ड नामों से प्रसिद्धि प्राप्त हुई।

मानस खण्ड में स्थित 'ऋषेश्वर महोदव लोहाघाट' अनेकों विशिष्टताओं से परिपूर्ण है। बताया जाता है कि शिव देव डांगर के रूप में अवतरित नहीं होते हैं। किन्तु यहां पर देवडांगर के रूप में शिव अवतरित होते हैं और अन्य देवी देवताओं की भांति ही अवतरित होकर अपने भक्तों को मनोकामना पूर्ण होने का आशीर्वाद देते हैं। महादेव की चमत्कारिक शक्तियों के बारे में यहां पर घटित घटनाओं पर जनश्रुति है कि– प्राचीन काल से ही बारह गांवों के शिव मंदिरों से नवरात्रि की अष्टमी के दिन ऋषेश्वर महोदव में पूजा अर्चना की परम्परा थी अंग्रेजी शासन काल में परम्परानुसार एक दिन पूजा के लिए कलीगांव से देवडांगर एवं श्रद्धालुओं का समूह अपने निश्चित मार्ग से मंदिर की ओर प्रस्थान कर रहा था। मार्ग में एक स्थान पर प्रवेश द्वार पर ताला लगा था। जिससे उन्हें निश्चित मार्ग से मंदिर तक पहुंच पाना सम्भव नहीं था। गुलामी के दौर में अंग्रेजों के विरोध के साहस की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। बताया जाता है कि भक्तों के रोष एवं अपार श्रद्धा से प्रभावित होकर देवडांगर ने चावल (अक्षत) मारकर प्रवेशद्वार का ताला खोल दिया एवं प्रवेशद्वार पर प्रयुक्त जंजीरें टूट कर बिखर गई, अंग्रेज अधिकारी भी शिव शक्ति के कायल हो गये और शिव भक्त बन गये। अंग्रेज अधिकारी द्वारा शिव को अर्पित चांदी का टोप आज भी देवडांगर सिर पर धारण करते हैं। इसी प्रकार चंद शासन काल एवं टनकपुर–तवाघाट मोटर मार्ग निर्माण के समय की कई घटनाओं के शिव शक्ति के चमत्कारों का उल्लेख यहां की लोक मान्यताओं में किया जाता है। महादेव की शक्तियों के सम्बन्ध में एक जनश्रुति यह भी है कि लोहाघाट के निकट सुई गांव के किसी व्यक्ति की गाय शिव लिंग पर दूध अर्पित करती थी। घर में गाय के दूध न देने से वह परेशान रहने लगा। गाय के साथ–साथ चल कर जब उसने गाय को शिव लिंग पर दूध अर्पित करते हुए देखा तो वह क्रोधित हो गया और उसने आवेश में आकर मंदिर से कुछ ही दूरी पर गाय का वध कर दिया। कुछ समय पश्चात् जब उसी गांव से शव दाह के लिए शव यहां पर लाया गया तो शिवालय के निकट आंधी तूफान ने शव यात्रियों को रोक दिया। माना गया कि शिव ने उन्हें अपने घाट में शव दाह की अनुमति नहीं दी, तब से सुई के लोग इस घाट पर शव दाह नहीं करते हैं।

पौराणिक महत्ता का यह स्थल लोहाघाट वासियों की अगाध आस्था एवं विश्वास का केन्द्र है। वर्ष भर श्रद्धालु शिव आराधना करने प्रातः काल यहां पर पहुंचते हैं। शीतकाल में जब अत्यधिक ठंड से पानी भी जमने लगता है फिर भी भक्तों का उत्साह कम नहीं होता है। मंदिर की स्वच्छता एवं पूजा अर्चना के लिए भक्तों की आवाजाही बनी रहती है। मंदिर में पूजा के लिए कलीगांव के पुजारी नियमित पूजा अर्चना करते हैं। निकटवर्ती क्षेत्र का यह शमसान घाट भी है। शमसान घाट को सुविधाजनक एवं पर्यावरण को प्रदूषण मुक्त रखने के लिए विगत वर्षों से शवदाह स्थल का निर्माण कार्य सुचारू है।

आस्था के इस केन्द्र में वर्षभर श्रद्धालुओं की आवाजाही रहती हैं। शिवरात्रि के दिन यहां पर एक विशाल मेले का आयोजन किया जाता है। शिवालय के साथ–साथ प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण लोहाघाट नगर का नजारा भी इस दिन दर्शनीय हो जाता है। मंदिर में शिवदर्शन को आतुर श्रद्धालुओं को वास्तविक शिव दर्शन की अनुभूति होती है। विशाल मेले के आयोजन के साथ–साथ इस वर्ष रामसेवा सांस्कृतिक समिति लोहाघाट द्वारा शिवरात्रि के दिन भव्य शिव यात्रा का आयोजन किया गया। आकर्षक झांकी के साथ प्रत्येक वर्ग के श्रद्धालुओं ने इस यात्रा में प्रतिभाग किया। परम्परागत मार्ग से होते हुए यह यात्रा ऋषेश्वर महादेव मंदिर तक पहुंची, पूजा अर्चना के बाद शिव दर्शन की अनुभूति से सरोबार होकर यात्रा का समापन किया गया। अतिरमणीक आस्था के इस स्थल पर विभिन्न पर्वों पर कथा, पुराण, भण्डारे के आयोजन होते रहते हैं। मंदिर पहुंच कर श्रद्धालुओं को अलोकिक शान्ति की अनुभूति होती है। आस्था का केन्द्र होने के साथ–साथ प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण यह स्थल पर्यटकों के आकर्षण का भी केन्द्र हैं।

yèkkuèkjk

जनपद के सुदूरवर्ती क्षेत्र में लधिया एवं क्वैराला घाटी के मध्य ऊंची चोटी पर अपार श्रद्धा का केन्द्र लधौनधुरा मंदिर स्थित है। लधौनधुरा के बारे में मेरे मित्र योगेश जोशी, पत्रकार अमर उजाला चम्पावत बताते हैं कि बिरगुल, सिप्टी, सैन्दर्क सहित दर्जनों गांव के श्रद्धा के इस शिव धाम तक अभी तक सड़क मार्ग निर्मित नहीं है। मंदिर तक पहुचने के लिए बिरगुल से 8–10 किलोमीटर दूसरी ओर सिप्टी, सैन्दर्क से 15–20 किलोमीटर की पैदल दूरी तय करनी पड़ती हैं

खटोली, पचनई से भी इस स्थल तक पैदल मार्ग निर्मित है। कार्तिक मास की चतुर्दशी को यहां पर रात्रि में जागरण किया जाता है आस–पास गांवों के लोग रात्रि में झोड़ा, चांचड़ी के रूप में देवगान करते हैं। संतान विहीन महिलायें सन्तान प्राप्ति के लिए यहां पर रात्रिजागरण करती हैं। माना जाता है कि चतुर्दशी की रात्रि यहां पर जागरण करने पर निःसन्तान महिलाओं को सन्तान प्राप्ति होती है।

पूर्णिमा के दिन मंदिर में विशाल मेले का आयोजन किया जाता है। मेले में देवरथ लाने की जिम्मेदारी खरही गांव के लोगों की होती है। पूर्णिमा के दिन सूर्योदय के समय खरही गांव से देवरथ लधौनधुरा मंदिर पहुंचता है। महाराना लोग इसके छड़ीदार होते है जो डोले के आगे–आगे चलते हैं। विशाल जनसमूह इस देवोत्सव में देवाशीष प्राप्ति के लिए पहुंचता है। जनकवि प्रकाश जोशी ''शूल'' का मानना है कि यह शिव मंदिर द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक है। उत्तराखण्ड के विभिन्न शिव मंदिरों में स्थापित शिवलिंग की भांति ही यहां पर स्थापित शिवलिंग पर भी गाय द्वारा दूध अर्पित करने की जनश्रुति है।

घने बांज के जंगल के मध्य स्थित अपार श्रद्धा के इस धाम पर अलौकिक शांति प्राप्ति होती है एवं देवदर्शन की अनुभूति होती है। लधौनधुरा जनपद के प्रमुख धार्मिक स्थलों में से एक है। मंदिर तक सड़क मार्ग न बन पाने एवं अति दुर्गम क्षेत्र में स्थित होने के कारण श्रद्धालुओं को मंदिर तक पहुंचने में कठिनाई होती है। क्षेत्र के लोग मंदिर तक सड़क सम्पर्क मार्ग बनाये जाने के लिए शासन प्रशासन से अपेक्षा करते हुए प्रयासरत हैं।

x# xkj [kukFk

देवभूमि उत्तराखण्ड के लोक पूजित देवी–देवताओं में गुरु गोरखनाथ का प्रमुख स्थान है। अपनी चमत्कारिक शक्तियों एवं दैवीय अनुकम्पा के लिये प्रसिद्ध गुरु गोरखनाथ के धाम उत्तराखण्ड के कई स्थानों पर स्थित हैं। जनपद चम्पावत के प्रसिद्ध धार्मिक स्थल गोरखनाथ धाम की प्रसिद्धि गोरखनाथ मंदिर में अनादिकाल से प्रज्ज्वलित धूनी से है। चम्पावत–तामली सड़क मार्ग में चम्पावत से लगभग 40 किलोमीटर की दूरी पर मंच नामक कस्बे के समीप स्थित यह स्थल जनपद वासियों के अगाध श्रद्धा के केन्द्र है। कहा जाता है कि यहां पर सतयुग से निरन्तर अखण्ड धूनी जल रही है। अनादि काल से स्थापित इस मठ में प्रसाद

के रूप में भभूत दी जाती है। इस त्रियुगी धूनी में बांज की लकड़ी को धोकर जलाया जाता है। इस अखंड हवन कुंड में प्रतिदिन दो बार पूजा होती है। वैसे तो गोरखनाथ धाम में वर्ष पर्यन्त श्रद्धालुओं का आवागमन बना रहता है। किन्तु शिवरात्रि के अवसर पर लोग यहां बड़ी संख्या में मन्नते मांगने आते हैं। कहा जाता है कि गोरखपंथ के एक गुरु इस बीहड़ जंगल में आये थे। उनके आशीर्वाद से इस पंथ की स्थापना हुई।

चंद शासन काल में गोरखानाथ धाम में मठ की स्थापना हुई। मठ में सोंठ, लंगोट तथा हवन सामग्री चढ़ायी जाती है। यहां के गुरु गोरखनाथ शिशुओं की अकाल मृत्यु नही होने देते हैं। जिन माता–पिता के जन्म होते ही बच्चों की मृत्यु हो जाती है। भविष्य में होने वाले नवजात शिशु को वे गोरखनाथ के दरबार में अर्पित कर पुनः वापस ले लेते हैं। ऐसे करने से बच्चों की अकाल मृत्यु नहीं होती है, ऐसी लोकमान्यता है।

कहा जाता है कि नेपाल तथा उससे संलग्न क्षेत्र में नरबलि दिए जाने की प्रथा थी। इसको रोकने के लिए गोरखनाथ के नाम से गोरखा फौज बनाई गई थी। नेपाल में राजशाही काल में राजमुद्रा एवं राज मुकुट पर गोरखनाथ की चरण पादुका का चिन्ह होता था।

बाबा गोरखनाथ नाग पंथ के प्रवर्तक मत्स्येन्द्र नाथ के शिष्य थे जो मूलतः हीनयानी बौद्ध सम्प्रदाय के अनुयायी थे। बाद में शिव के प्रति आस्था हो जाने से नागपन्थी हो गये। कुमाऊं में गुरु गोरखनाथ का व्यापक प्रभाव है। यहां के देवजागरों में गुरु गोरखनाथ का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। गुरु गोरखनाथ के बारे में यह भी कहा जाता है कि इन्होंने एक ही जन्म काल में 84 लाख योनियों का भोग करके अपना जीवन पूर्ण कर लिया था। अगाध आस्था, अलौकिक शान्ति एवं ईश्वरीय अनुभूति का यह धाम जनपद का प्रमुख धार्मिक स्थल है।

dMkb nsoh efUnj fc'kx

लोहाघाट–देवीधूरा––हल्द्वानी सड़क मार्ग में लोहाघाट से 05 किलोमीटर की दूरी पर माँ कड़ाई देवी का मन्दिर स्थित है। मन्दिर तक पहुंचने के लिए मल्लाढ़ेक विद्यालय के पास आकर्षक प्रवेश द्वारा बना है। सड़क से लगभग 200 मीटर की ऊंचाई पर स्थित मन्दिर तक पक्का कंक्रीट मार्ग निर्मित है। कड़ाई देवी के बारे में लोकमान्यता है कि कड़ाई देवी बाणासुर की माँ थी। पूर्व में बिशुंग स्थित किला बाणासुर के क्रिया

कलापों का मुख्य केन्द्र था बाणासुर किले की निचली चोटी पर घने देवदार वनों के मध्य स्थित, माँ कड़ाई देवी का मन्दिर अलौकिक शांति का केन्द्र है।

लोकमान्यता है कि देवी शक्ति के इस स्थल पर आने वाले भक्तों की मुरादें पूरी होती है एक छोटे से कांटेदार वृक्ष में माँ का वास माना जाता है। क्षेत्र के बुजुर्गों का कहना है कि माँ के मंदिर का यह वृक्ष आदिकाल से एक ही स्थिति में है यह वृक्ष कभी बड़ा नहीं होता। क्षेत्रवासियों ने माँ के प्रति अगाध आस्था प्रकट करते हुए मंदिर का सौन्दर्यीकरण, धर्मशाला निर्माण एवं पेयजल की उचित व्यवस्था की है। मंदिर परिसर स्वच्छ एवं अति आकर्षक लगता है। मंदिर में वर्ष भर श्रद्धालुओं द्वारा पूजा अर्चना की जाती है। लेकिन मन्दिर के अन्दर प्रवेश की अनुमति सिर्फ मन्दिर के पुजारी को ही होती है। अश्विन नवरात्रि को कढ़ाई मन्दिर में विशेष देवोत्सव मनाया जाता है। जिसमें बिशुंग क्षेत्र के साथ–साथ आस–पास के गांवों एवं लोहाघाट नगर के श्रद्धालु माँ के दर्शन के लिए आते हैं। विजयादशमी के दिन क्षेत्र के विभिन्न गांवों से श्रद्धालु बिशुंग गांव पहुंचते हैं। देवरथों के साथ 3–4 बजे सुंई–बिशुंग क्षेत्र के देवडांगर एकत्र होकर दूध–जल से स्नान कर श्रद्धालुओं द्वारा अर्पित दूध, चावल, फल ग्रहण करते हैं। श्रद्धालुओं द्वारा देव अर्पित चावल दूध को ''गाल'' कहा जाता है। पुरातन मान्यतानुसर दूध और चावल की गाल भक्तों द्वारा छः माने से छः नाली तक भी दी जाती है। (लगभग 3 किलोग्राम से 15 किलोग्राम तक) विजयादशमी पर्व के दिन अपार जनसमूह के समक्ष देवडांगर अवतरित होकर भक्तों द्वारा अर्पित ''गाल'' खाते हैं। एक के बाद एक ''गाल'' खाने का क्रम चलता है, दैवीय चमत्कार के साक्षी श्रद्धालुओं में माँ प्रति आस्था और भी दृढ़ हो जाती है। श्रद्धा एवं आस्था का यह केन्द्र अत्यन्त मनोरम स्थल है। बिशुंग के समतल उपजाऊ मैदान की छोटी सी पहाड़ी और बाणासुर किले के मार्ग में किले के समीप स्थित यह स्थल जनपद के दर्शनीय एवं धार्मिक स्थलों में से एक है।

fMIV'oj efUnj pEikor

चम्पावत नगर के अन्तर्गत छतार पुल से पूल्ड आवास सड़क मार्ग पर गंडक (गिड़िया) नदी के किनारे स्थित डिप्टेश्वर मन्दिर नगर वासियों की श्रद्धा का प्रमुख धार्मिक स्थल है। अलौकिक, चमत्कारिक

मान्यताओं के लिए प्रसिद्ध डिप्टेश्वर धाम में भगवान शिव के साथ–साथ माँ दुर्गा, लक्ष्मी, नारायण, पंचमुखी हनुमान एवं शिव के प्रमुख गण बेताल के मन्दिर स्थित हैं। उत्तर वाहिनी गंड़क नदी में स्नान की विशेष मान्यता है। जनश्रुति है कि पांडवनी–उत्तर गंडकी के संगम स्थल पर स्थित इस धाम (डिप्टेश्वर) के निकट ही पांडवों ने गेहूं पीसने का घराट (पनचक्की) लगाया था। गंडक नदी के तट पर स्थित इस धाम में वर्ष भर श्रद्धालुओं की आवाजाही बनी रहती है। प्रमुख धार्मिक पर्वों में श्रद्धालुओं द्वारा विशेष पूजा अर्चना की जाती है। मान्यता है कि कालसर्प योग निवारण के लिए यहां पर विशेष पूजा अर्चना की जाती है। विधि–विधान से पूजा अर्चना करने पर श्रद्धालुओं को अति कष्टकारी ग्रहयोग काल सर्प से मुक्ति प्राप्त होती है। श्रद्धा एवं विश्वास के साथ पूजा अर्चना व ध्यान करने पर भक्तों को ज्योतिपुंज के दर्शन होते हैं। आलौकिक ज्योतिपुंज दर्शन से भक्तों की मनोकामना पूर्ण होती है। इसीलिए इस धाम को डिप्टेश्वर (दीप्तेश्वर) नाम से जाना जाता है। नगर क्षेत्र से 2–3 किलोमीटर की दूरी पर अत्यन्त मनोहारी इस धाम में आकर ईश्वरी कृपा की अनुभूति होती है।

Økr'oj egkno efUnj

चम्पावत नगर के पूर्व में स्थित कूर्म पर्वत के शिखर पर अपार श्रद्धा का केन्द्र क्रान्तेश्वर महादेव मन्दिर स्थित है। घने निर्जन वनों के मध्य इस धाम की ऐतिहासिक एवं धार्मिक मान्यता है। कहा जााता है कि भगवान विष्णु ने इसी पर्वत चोटी पर कूर्म अवतार में तपस्या की थी। इसी कूर्मावतार से इस क्षेत्र का नाम कुमूं, कुमांयू पड़ा। उन्नत चोटी पर स्थिति क्रान्तेश्वर मन्दिर से चम्पावत नगर का अनुपम प्राकृतिक दृश्य से दिखाई देता है। इस धाम की प्रमुख विशेषता यहां पर स्थापित शिवलिंग है। अधिकांश शिवलिंग शक्ति के ऊपर स्थापित होते हैं। लेकिन यहां स्थापित शिवलिंग अधोगामी है। कहा जाता है कि यहां आने वाले भक्तों को शिव व्याघ्र रूप में दर्शन देते हैं। चम्पावत से सप्तेश्वरी परिक्रमा में इस धाम की विशेष मान्यता है। इस धाम से परिक्रमा का प्रारम्भ किया जाना विधान सम्मत माना जाता है। और मान्यता है कि यहां से प्रारम्भ परिक्रमा फलदायी होती है। मनोकामना पूर्ण होने की आशा एवं अगाध श्रद्धा भाव से जनपद के भक्त जन वर्ष भर इस अलौकिक धाम में पूजा अर्चना करते हैं आध्यामिक केन्द्र के साथ–साथ ध्यान केन्द्र एवं पर्यटन

के रूप में इस स्थान के विकसित होने की असीम सम्भावनायें है। जनपदवासी इस पौराणिक मान्यता के धार्मिक केन्द्र के विकास के प्रति प्रयासरत है।

ukxukFk efnj pEikor

चम्पावत नगर मुख्यालय में राजबुंगा किले (वर्तमान तहसील) के प्रवेशद्वार पर स्थित नागनाथ मन्दिर की ऐतिहासिक मान्यता है। कहा जाता है कि चन्द शासन काल में नागनाथ चन्द राजाओं के ईष्ट देवता थे। इस मन्दिर के भीतर नागनाथ बाबा की समाधि बनी हुई है। यहां पर राजा कल्याण चंद के काल में सुरराज सद्म तुल्य भवन नागनाथ की स्मृति में बनावाया गया था और एक शिलालेख भी लगवाया था। चंद शासन काल में लगने वाली नौमत इस मन्दिर की ऐतिहासिक गाथा बनकर रह गई है। बताया जाता है कि आज भी यहां पर अखण्ड धूनी रमाकर नागनाथ देवता का स्मरण किया जाता है मन्दिर के बांये छोर पर काल भैरव का मन्दिर भक्तों की अगाध श्रद्धा का केन्द्र है। मन्दिर परिसर में ही स्थापित लक्ष्मी नाराण मन्दिर में भी श्रद्धालुओं द्वारा प्रतिदिन पूजा–अर्चना सम्पन्न की जाती है। बद्रीनाथ धाम की तरह ही यहां पर पूजा के समय नौमत लगती है। किंवदंती है कि नागनाथ नामक योगी ने चम्पावत के राजबुंगा के सम्मुख आकर डेरा डाल दिया था। राजा ने साधु की श्रद्धापूर्वक सेवा की। साधु ने प्रसन्न होकर राजा को एक चाबुक देते हुए कहा कि उनका सेनापति जहां भी इस चाबुक को घुमाएगा वहीं शत्रु की सेना परास्त हो जायेगी।

सेनापति चाबुक लेकर डोटी (नेपाल) गया। डोटी की सेना को परास्त होना पड़ा तब से राज्य में राजा कीर्तिचन्द्र महाप्रतापी राजा कहाने लगे। राजा ने बाबा से प्रभावित होकर उन्हें अपना सलाहकार नियुक्त किया। बाबा के निर्देशन में कार्य करते हुए राजा ने बारामंडल, पाली और फल्दकोट पर विजय प्राप्त की। कीर्तिचन्द चन्दवंश के शक्तिशाली राजा के रूप में माने जाने लगे।

नगर में स्थित अगाध श्रद्धा के इस केन्द्र में प्रातः सांय विधि–विधान से पूजा अर्चना सम्पन्न होती है। अपार श्रद्धा से भक्तजन मनोकामना पूर्ण होने का आर्शीवाद प्राप्त करते हैं। संतान सुख एवं शत्रु संकट से मुक्ति के लिए नागनाथ की पूजा–अर्चना की जाती है माना जाता है कि श्रद्धापूर्वक भक्ति से भक्तों की मनोकामना पूर्ण होती है।

ukxkt|u efnj u[k:?kkV

जनपद के दूरस्थल क्षेत्र रौशाल–पासम के निकट काली नदी के किनारे स्थित नागार्जुन मंदिर नखरूंघाट मंदिर के नाम से प्रसिद्ध है। गुमदेश पट्टी के 22 गांवों की सींक–भींक का यह केन्द्र सांस्कृतिक विरासतों को संजोये हुए अगाध आस्था का देवस्थल है। सल्टा गांव के पांडेय लोग इस मंदिर के पुजारी हैं। सल्टा गांव के बुजुर्ग ईश्वरी दत्त पांडेय, मथुरा दत्त पांडेय एवं शिक्षक खष्टी बल्लभ पांडेय इस मंदिर के संबंध में प्रचलित जनश्रुति के बारे में बताते है कि इस मार्ग से पैदल चलने वाले दर्शनार्थी जब मंदिर तक भूखे प्यासे पहुंचते थे तो मंदिर में आराधना करने पर स्वतः ही उनकी पसंद का भोजन तैयार होकर उन्हें प्राप्त हो जाता था। देव कृपा से प्राप्त भोजन प्राप्त करने के उपरांत दर्शनार्थियों को असीम आनंद की अनुभूति होती थी। इस महिमा के प्रसार से नखरूंघाट को ख्याति प्राप्त हुई।

काली नदी के किनारे समतल रेतीले मैदान में स्थित मंदिर लोहाघाट से 35 किमी० दूर पासम गांव से 3 किमी० की पैदल दूरी पर स्थित है। दूसरी ओर लोहाघाट से 30 किमी० दूर, लेटी डुंगरा से लगभग 2 किमी० की पैदल यात्रा के बाद मंदिर तक पहुंचा जा सकता है। गुमदेश पट्टी के 22 गांवों के साथ–साथ यह स्थल नेपाल के निकटवर्ती गांवों के लोगों की श्रद्धा का भी केन्द्र है।

आश्विन मास की बुद्ध पूर्णिमा को क्षेत्र की जनता श्रद्धापूर्वक उत्तराखण्ड की लोक परम्परानुसार ढ़ोल–नगाड़ों के साथ देव पूजन करती है जिसमें नेपाल के श्रद्धालु भी शिरकत करते है। आस्था के साथ–साथ यह स्थल काली कुमांऊ–नेपाल के रोटी बेटी के सम्बंधों को भी स्मृति कराता है। पूर्णिमा के दिन निःसंतान महिलायें पुत्र प्राप्ति के लिये रात्रि जागरण करती है बताया जाता है कि मंदिर में रात्रि जागरण से निःसंतान महिलाओं को पुत्र प्राप्ति होती है।

o"kkh nsoh efnj eMyd

कत्यूरी शासनकाल में निर्मित वैष्णवी देवी मंदिर लोहाघाट से 24 किमी० की दूरी पर मडलक नामक स्थान पर स्थित है। भैय्यादूज के दिन वैष्णवी देवी मंदिर में विशाल मेले का आयोजन किया जाता है जिसमें बगोटी, मजपीपल, मडलक और बुंगा गांव से देवरथ मंदिर तक

पहुंचते है। बगोटी का देवरथ विशेष आर्कषण का केन्द्र होता है। जनपद में प्रचलित देवपूजा के लिये यहां पर भी परम्परानुसार चैत्र की नवरात्रियों में बकरी एवं भैंसे की बलि दी जाती थी। विगत वर्ष से यहां पर बलि प्रथा रोक दी गयी है। मंदिर में स्थापित कत्यूरी शासनकाल की शिल्पकला के बेजोड़ नमूने की स्मृतियां शेष है। पुरातन ऐतिहासिक विरासत के महत्व को ध्यान में रखते हुए पुरातात्विक सर्वेक्षण विभाग द्वारा मंदिर का जीर्णोद्धार प्रस्तावित है। वर्तमान में मंदिर पुरातात्विक सर्वेक्षण विभाग की देखरेख में है।

f'ko efnj etihiy

मडलक के निकट मजपीपल गांव में स्थित शिव मंदिर प्राचीन शिल्पकला की अद्भुत मिसाल है। जागेश्वर मंदिर समूह के समान निर्मित शिव मंदिर क्षेत्र के लोगों की अगाध आस्था का केन्द्र है। इस मंदिर का निर्माण कत्यूरी शासनकाल का माना जाता है। कुछ समय पूर्व मंदिर के आसपास लगभग 6 फिट गहरी खुदाई करने पर मुख्य मंदिर के चारों ओर कई शिवलिंग मिले थे। आस्थावान ग्रामीणों का अनुमान है कि खुदाई किये जाने पर पुरातन काल की परम्परा से सम्बन्धित कई भग्नावशेष प्राप्त हो सकते है।

वर्तमान में पुरातात्विक विभाग द्वारा इस ऐतिहासिक स्थल का पुनर्रुद्धार प्रस्तावित है। मंदिर पुरातात्विक सर्वेक्षण विभाग की देखरेख में है।

❑❑

साभार/सन्दर्भ ग्रन्थ

1. कुमांऊ का इतिहास – श्री बद्री दत्त पाण्डेय
2. राग भाग काली कुमाऊं – डॉ० राम सिंह
3. विवेकानन्द आश्रम श्यामलाताल (फोल्डर) –
4. स्मारिका संस्कृति सुमन – प्रकाश चन्द्र राय
5. गोरा साधु (जिम कार्बेट) – प्रकाश थपलियाल
6. माँ नन्दाष्टमी मेला चम्पावत स्मारिका 2010 – दिनेश चन्द्र पाण्डेय
7. विकास पुस्तिका चम्पावत 2008 – सूचना एवं लोक सम्पर्क विभाग चम्पावत
8. दैनिक समाचार पत्र– दैनिक जागरण में चम्पावत से प्रकाशित धार्मिक/आध्यात्मिक रचनायें।
9. उत्तराखण्ड के सामाजिक एवं सांस्कृतिक पुर्नजागरण में आर्य समाज तथा रामकृष्ण मिशन का योगदान – डॉ० अवनीन्द्र कुमार जोशी
10. उत्तराखण्ड का सीमांत जनपद चम्पावत – डॉ० दिनेश चन्द्र बलूनी, इन्द्र लाल वर्मा
11. पहाड़ों के झरोखों से – ललित प्रसाद पाण्डेय (बाबा आदित्यदास)
12. उत्तराखण्ड के राष्ट्रीय संरक्षित स्मारक – अधीक्षण पुरातत्वविद, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, देहरादून मण्डल

13. हिमालयन गजेटियर — एडविन टी० एटकिंसन
अनुवादक—प्रकाश थपलियाल

14. दर्शन एंव इतिहास, गुरुद्वारा श्री रीठासाहिब, गु० श्री थड़ासाहिब बागेश्वर — स० दलजीत सिंह मान

15. इतिहास गुरुद्वारा श्री नानकमत्ता साहिब, गुरुद्वारा श्री रीठासाहिब — हिन्दी अनुवाद— स० जोगिन्दर पाल सिंह

❑❑

आभार

विद्वान आत्मीय स्वजन जिन्होंने मुझे विभिन्न धार्मिक स्थलों के बारे में प्रचलित लोक मान्यताओं, किंवदंतियों के बारे में अमूल्य जानकारियां दी।

- संजय जोशी कम्प्यूटर आपरेटर लो०नि०वि० लोहाघाट।
- मदन मोहन जोशी प्रवक्ता रा०इ०का० बरदाखान।
- नारायण दत्त जोशी प्रवक्ता रा०इ०का० बरदाखान।
- उत्तम सिंह फर्त्याल सहायक अध्यापक, निवासी डुंगरी फर्त्याल (बिशुंग)
- रमेश चन्द्र चौबे, पुजारी भगवती मंदिर सुंई।
- मेहकम सिंह मेहता, गोपाल सिंह, भवान सिंह, महेश्वर सिंह मेहता निवासी रेगडूं।
- सतीश पाण्डेय, विपिन पाण्डेय निवासी चम्पावत।
- डॉ० राकेश वर्मा, सहायक अध्यापक प्रा०वि० वारसी।
- भगवती प्रसाद जोशी प्रवक्ता रा०इ०का० पार्टी।
- चन्द्रशेखर जोशी, सतीश चन्द्र जोशी, योगेश जोशी अमर उजाला चम्पावत।
- पान सिंह चमलेगी समन्वयक रौसाल।
- शंकर दत्त जोशी समाजसेवी सूखीढ़ांक।
- स्वामी राम महाराज जी विवेकानन्द आश्रम श्यामलाताल।
- देवी दत्त बिष्ट–पुजारी पंचमुखी महादेव मंदिर टनकपुर।
- राम दत्त पुजारी–पुजारी बाराही मंदिर देवीधुरा।
- उमेद सिंह चौहान निवासी देवीधूरा।
- हरीश चन्द्र गहतोड़ी पुजारी ऐड़ी मन्दिर फटकशिला।

- भैरव गिरि महन्त, पवन गिरि महन्त पुजारी बालेश्वर।
- खष्टी बल्लभ पांडेय शिक्षक, निवासी सल्टा।

परम स्नेहीजन जिन्होंने पुस्तक की आकर्षकता बढ़ाने एवं प्रमुख दर्शनीय स्थलों से आम जनमानस को परिचित कराने की सद्भावना से विभिन्न स्थलों के फोटोग्राफ उपलब्ध कराकर सहयोग दिया।

- योगेश जोशी दैनिक समाचार पत्र अमर उजाला चम्पावत
- हरीश उप्रेती 'करन' दैनिक समाचार पत्र हिन्दुस्तान चम्पावत
- मनोज राय 'मन' दैनिक समाचार पत्र दैनिक जागरण लोहाघाट
- हिमाशुं फोटो स्टूडियों लोहाघाट
- जगदीश राय दैनिक समाचार पत्र हिन्दुस्तान लोहाघाट
- पान सिंह चमलेगी समन्वयक रौशाल
- गोपी वर्मा ठाड़ाढुंगा लोहाघाट
- नगेन्द्र जोशी, अध्यक्ष लड़ीधूरा महोत्सव समिति बाराकोट
- चन्द्रकिशोर पांडेय शिक्षक लोहाघाट

dEI;Vj dEikftx] ççQ jhfMx] QkVk p;u% मनोज बिष्ट, चम्पावत, प्रकाश चन्द्रराय लोहाघाट।

doj i"B ,o QkVk p;u] l;ktu% गोपी वर्मा ठाड़ाढुंगा लोहाघाट।

❑❑

खबरों में चम्पावत

जागरण 1 सितंबर 2013 www.jagran.com

पर्यटन की दृष्टि से लाजवाब है चम्पावत

* कुमाऊं कमिश्नर ने लोहाघाट पहुंच कर विभिन्न गतिविधियों का लिया जायजा
* विकास कार्यों की ली जानकारी जरूरी निर्देश दिए

लोहाघाट एनेक्सी भवन में अधिकारियों से वार्ता करते मंडलायुक्त अवनेन्द्र सिंह नयाल।

जागरण, लोहाघाट : जिला भ्रमण पर पहुंचे मंडलायुक्त अवनेन्द्र न्याल ने शनिवार को लोहाघाट पहुंचकर विभिन्न गतिविधियों व विकास कार्यों का जायजा लिया। उन्होंने अद्वैत आश्रम मायावती, [illegible] तथा रीठासाहिब को पर्यटन के क्षेत्र में विकसित करने की बात कही। उन्होंने बताया कि पर्यटन विभाग द्वारा पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए जिले में 4.95 करोड़ की लागत से ईको हटों का निर्माण किया जाएगा।

मंडलायुक्त श्री न्याल ने बताया कि एबटमाउंट में अत्याधुनिक बहुउद्देशीय हॉल तथा अन्य दो स्थानों पर गजीबो स्थापित किए जा रहे हैं। साथ ही यूरोप से लकड़ी मंगाकर [illegible] का निर्माण किया जाएगा। उन्होंने जिलाधिकारी दीपेन्द्र चौधरी से उद्योग विभाग की 400 नाली भूमि में फिल्म सिटी का निर्माण के लिए प्रस्ताव भेजने की बात कही तथा उन्होंने गौढ़ी क्षेत्र में एसएसबी को फायरिंग रेंज के लिए उपलब्ध कराई गई भूमि को निरस्त करने के आदेश दिए। इस मौके पर सीडीओ एसएस पांगती, एसडीएम नरेश दुर्गापाल, [illegible] प्रबंधक आरके भार्गव, [illegible] हरसिंह रजवार, आरएस नेगी सहित कई अधिकारी मौजूद थे।

4 | दैनिक जागरण हल्द्वानी, 12 अक्टूबर 2013 पिथौरागढ़/चम्पावत

[illegible]

एक नजर

काले फीते बांध विरोध जारी

[illegible]

भक्त नहीं जाता खाली हाथ

* कूर्मपीठी स्थित क्रांतेश्वर की महिमा निराली

जागरण, चम्पावत : कूर्मपीठी में स्थापित क्रांतेश्वर धाम की महिमा निराली है। यहां आने वाला भक्त खाली हाथ नहीं लौटता। उसकी मनवांछित कामना पूरी होती है और भगवान भोले स्वयं रूप में दर्शन भी देते हैं। कहा जाता है कि इस चोटी पर भगवान विष्णु ने कूर्म रूप में तपस्या की थी। [illegible]

मां की आराधना, पूजन विधि और तस्वीरें देखने के लिए लॉग इन करें http://www.jagran.com/topics/navratri

[illegible]

11 NOV 2017

www.jagran.com

कुमाऊं-गढ़वाल के रिश्ते मजबूत कर रहे 'गोल्ज्यू'

* गढ़वाल में कंडोलिया देव के रूप में स्थापित

चम्पावत गोल्लदेव मंदिर में गद्दी लगाते देव डंगरिए। जागरण

जासं, चम्पावत : आराध्य देव गोल्ज्यू उत्तराखंड को एक सूत्र में पिरो रहे हैं। जिस तरह मां नंदा पूरे राज्य में पूजी जाती है। उसी तरह कुमाऊं और गढ़वाल के रिश्तों को मजबूती देने में गोल्ल देव का भी बड़ा योगदान है। गढ़वाल में गोल्ल देव कंडोलिया देव के रूप में स्थापित हैं। इस बार पौड़ी से देव डंगरिए के साथ दूसरी बार ज्योति यात्रा लेकर पहुंचे दल का यहां लोगों ने स्वागत किया। इस मौके पर गोल्ज्यू के मूल स्थान में विशेष पूजा-अर्चना के साथ ही गोल्ल देव की गद्दी के पास ही जागर का आयोजन हुआ।

उल्लेखनीय है कि गोल्ल कुमाऊं में न्यायकारी राजा रहे और बाद में उन्हें कुमाऊं के आराध्य देव के रूप में पूजा जाने लगा। उनका मूल स्थान चम्पावत तथा शाखाएं अल्मोड़ा के चितई और नैनीताल के घोड़ाखाल में हैं। कुमाऊं में गोल्ल देव को न्यायकारी देव के रूप में पूजा जाता है। इनके दरबार में उत्पीड़ित और दुखी किसी भी तरह के न्याय के लिए गुहार लगाते हैं। माना जाता है कि सभी को गोल्ज्यू द्वारा न्याय दिया जाता है। तीनों स्थानों पर स्थापित इन मंदिरों में हजारों अर्जियां टंगी हुई दिखाई देती हैं। कहा जाता है कि इस न्यायकारी देव के दरबार में जो भी आता है उसको जरूर न्याय मिलता है। अब तो इन मंदिरों में भगवान को साक्षी मानकर विवाह भी होते हैं और बकायदा शादियों के स्टाम्प भी दिए जाते हैं। कहा जाता है कि वर्षों पूर्व चम्पावत से ही कुछ लोग गढ़वाल के पौड़ी स्थान पर बस गए थे और वह अपने साथ कंडी में भगवान गोल्ज्यू की मूर्ति को ले गए। लोगों ने वहां उनकी स्थापना की। जहां गोल्ज्यू की स्थापना हुई उसे कंडोलिया और उन्हें कंडोलिया देव के नाम से पूजा जाने लगा। पिछले कई वर्षों तक वहां के लोगों को मूल स्थान की जानकारी नहीं थी। अक्सर वह अल्मोड़ा के चितई मंदिर में आकर पूजा करते थे। पिछले वर्ष स्थानीय निवासी पं. मोहन राम जब पौड़ी अपने पुत्र सब इंस्पेक्टर के यहां गए थे तो वहां कुछ लोगों ने चितई के बारे में उनसे चर्चा की। इस दौरान मोहन राम ने बताया कि गोल्ज्यू का मूल स्थान तो चम्पावत में है। जिस पर वह इसी जुलाई माह में 40 लोगों के साथ ज्योति यात्रा लेकर यहां पहुंचे और जागर लगाकर पूजा की। बीते रोज शुक्रवार को 15 सदस्यीय एक दल ज्योति यात्रा के साथ फिर चम्पावत पहुंचा। बीती रात्रि जागर के बाद शनिवार की सुबह देव डंगरिए कमल सिंह ने दरबार लगाते हुए लोगों को आशीर्वाद दिया। ज्योति यात्रा में शिव चन्द गुलाटी, दरबान सिंह, जदुबीर, कमल गुलाटी, विमल बहुगुणा, महिपाल सिंह पंवार, वीरेन्द्र कुमार, नितिन कुमार सहित तमाम भक्तजन शामिल हैं।

मूर्तियों का प्राण प्रतिष्ठा

14 OCT 2017

... के दर्शनों को पहुंचे भक्त

महंत रूपेशपुरी नौ दिन रहे जमीन के अंदर

कन्या पूजन के साथ पूजी मां सिद्धिदात्री

पिथौरागढ़/चम्पावत जागरण

दीप महोत्सव का आगाज करेंगे विधायक

पिथौरागढ़/चम्पावत जागरण

शारदीय नवरात्र : भक्तों की झोली भरता है मानेश्वर धाम

...यहां स्नान व दर्शन से होती है निरोगी काया

मानेश्वर धाम। जागरण

कैलाश यात्रा का रहा है मुख्य पड़ाव

राजा निर्भय चंद ने दिया भव्य स्वरूप

कुमाऊं जागरण

4 | दैनिक जागरण

मां के दर्शन से होती मुरादें पूरी

पहाड़ से प्रकट हुई महाकाली

मां के पीछे चलते हैं भैरव बाबा

23 NOV 2013 पिथौरागढ़/चम्पावत जागरण

रीठासाहिब पर्यटन को भी महत्वपूर्ण

निरीक्षण

- लोनिवि के प्रमुख सचिव ने दिए अधिकारियों को आवश्यक निर्देश
- गुरुद्वारे में माथा टेका सुनी समस्याएं

लधियाघाटी के ग्रामीणों ने बताई समस्याएं

2 | दैनिक जागरण हल्द्वानी, 15 अक्टूबर 2013 कुमाऊं जागरण

लड़ीधुरा महोत्सव सांस्कृतिक धरोहर

विधायक ने मंच निर्माण को की पांच लाख की घोषणा, सांस्कृतिक कार्यक्रम ने लगाए चार चांद

महोत्सव में आज

www.jagran.com

पिथौरागढ़/ चम्पावत जागरण

रात्रि जागरण से झोली भरती है ज्वाला देवी

आज लाए जाएंगे हिंडोला के खंभे

4 | दैनिक जागरण

चम्पावत जागरण

नवरात्र में गोरल मंदिर में लगती है जागर

ज्योति यात्रा के साथ जत्थों में आते हैं श्रद्धालु, कुमाऊं में न्यायकारी देव के रूप में पूजे जाते हैं गोलज्यू

भक्तों ने की मां कूष्मांडा की पूजा-अर्चना

पांच हजार श्रद्धालुओं ने शीश नवाए

आकर्षक होगा महादेव महोत्सव

संवाद, चम्पावत: विकासखंड की ग्राम पंचायत रूईया में होने वाला महादेव महोत्सव इस बार आकर्षक और नए अंदाज में मनाया जाएगा। 13 अक्टूबर से होने वाले दो दिनी इस महोत्सव के मुख्य अतिथि पूकेडी अध्यक्ष फर्सी सिंह ऐरी होंगे। इस संबंध में समिति के पदाधिकारियों ने डीएम से मुलाकात कर उन्हें न्योता दिया।

एकादश रुद्र रूप में महादेव मंदिर रूईया, बाकरुटा, साल्ली क्षेत्र के बीचोंबीच स्थित है। यहां प्रतिवर्ष नवरात्र के मौके पर महादेव महोत्सव का आयोजन किया जाता है। इस बार महोत्सव में विभिन्न सांस्कृतिक

तैयारी

- **रूईया में 13 से दो दिनी आयोजन**
- **ऐरी होंगे मुख्य अतिथि**

टीमें व स्कूली बच्चे कार्यक्रमों का आयोजन करेंगे। साथ ही दशमी के रोज मां भगवती और महादेव बाबा का डोला निकलेगा। इस बार महोत्सव का आयोजन 13 व 14 अक्टूबर को किया जा रहा है। महोत्सव में सांसद प्रतिनिधि डॉ. महेश देव, भाजपा के हिमेश कलखुड़िया, गोविंद सामंत, हाल्पमैनेटर के प्रबंधक मदन सिंह महर अतिथियों के रूप में मौजूद रहेंगे। महोत्सव की व्यवस्थाओं को लेकर मंगलवार को मेला कमेटी के अध्यक्ष कमल सिंह मेहरा की अगुवाई में पदाधिकारियों ने जिलाधिकारी दीपेंद्र कुमार चौधरी से मुलाकात की और विभिन्न व्यवस्थाओं के लिए ज्ञापन दिया। पुलिस अधीक्षक करण सिंह नगन्याल से भी मुलाकात कर शांति व्यवस्था बनाए रखने की मांग की। इधर, प्रधान त्रिलोक सिंह, गिरधर सिंह रावत, हीरा सिंह, श्याम सिंह महर, सूरज सिंह, दिनेश भट्ट, पूरन सिंह रावत, हरीश भट्ट, नवीन सिंह रावत, पूरन सिंह महर, जगत सिंह, हीरा सिंह, कमल सिंह महर आदि महोत्सव को सफल बनाने के लिए व्यवस्थाओं में जुटे हुए हैं।

4 | दैनिक जागरण

चम्पावत जागरण

लक्ष्मी नारायण के दर्शन से होती है मुराद पूरी

नागनाथ मंदिर : शत्रुओं से मिलती है निजात, बदरीनाथ की तरह पूजा के समय लगती है नौमत

जन शक्ति मंदिर में पूजा-अर्चना

पिथौरागढ़/चम्पावत जागरण

ज्योति पुंज के दर्शन से मनोकामना होती है पूर्ण

भक्तों की तादाद से ट्रेनें हुई पैक

पंचमी को मंदिरों में भक्तों का तांता

हमरो कुमाऊं कति स्वान लाग छ

खेलकूद व शैक्षिक प्रतियोगिताएं

हवन और भंडारे में उमड़े श्रद्धालु

दैनिक जागरण

पिथौरागढ़/चम्पावत जागरण

भक्तों ने पूजी मां महागौरी

मां के जयकारे से गूंजा लोहाघाट

देव डांगरों पर की फूलों की बरसात, एक दर्जन से अधिक गांवों से निकले देव डांगरों के जुलूस

मंदिरों में हुई विशेष पूजा अर्चना

क्रांतेश्वर में भागवत कथा और साधना जारी

गोरखनाथ की महिमा अपरंपार

लड़ीधूरा महोत्सव का आगाज आज

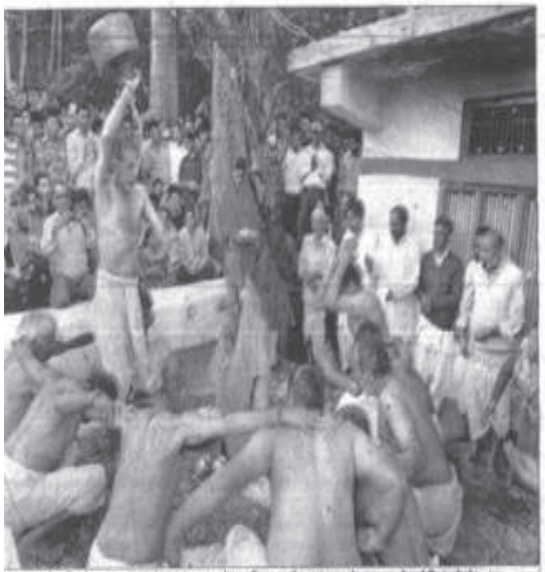

दैनिक जागरण हल्द्वानी, 15 अक्टूबर 2013
पिथौरागढ़/चम्पावत जागरण
www.jagran.com
श्रद्धालु बने डांगर उत्सव के साक्षी
भक्तों की मुराद पूरी होने पर दी जाती है गाल, महिला श्रद्धालुओं ने बढ़-चढ़कर लिया भाग
गलचौड़ा में भी डांगरों ने खाई गाल
रेगड़ू में जत्थों ने की महादेव मंदिर की परिक्रमा
पूजा-अर्चना के साथ रेगड़ू महोत्सव का समापन
हजारों लोगों ने मांगी मन्नतें

आध्यात्मिक रंग में सराबोर हो गए सेनानी

पिथौरागढ़/चम्पावत जागरण

पारंपरिक वस्त्रों में कलश यात्रा

लड़ीधुरा महोत्सव का आगाज आज, भक्तों ने मंडारे में किया प्रसाद ग्रहण

आंचलिक लोक गीत व नृत्य की धूम

तूने मुझे बुलाया शेर वालिए...

मेले में उमड़ा जनसैलाब